द्वितीय अध्याय

"हास्य-व्यंग्य का स्वरूप-विवेचन एवं विवेच्य एकांकियों के हास्य-व्यंग्य का स्वरूप"

द्वितीय अध्याय

''हास्य-व्यंग्य का स्वरूप-विवेचन एवं विवेच्य एकांकियों के हास्य-व्यंग्य का स्वरूप''

❑ **प्रास्ताविक -**

2.1 हास्य-व्यंग्य का उद्‌भव एवं विकास

2.2 हास्य का स्वरूप-विवेचन

2.2.1 हास्य रस का शास्त्रीय-विवेचन

2.2.1.1 हास्य का स्थायीभाव

2.2.1.2 हास्य के विभाव

2.2.1.3 हास्य के अनुभाव

2.2.1.4 हास्य के संचारीभाव

2.2.2 'हास्य' शब्द का अर्थ

2.2.3 हास्य की परिभाषा

2.2.3.1 संस्कृत आचार्योंद्‌वारा प्रस्तुत परिभाषाएँ

2.2.3.2 भारतीय चिंतकोंद्‌वारा प्रस्तुत परिभाषाएँ

2.2.3.3 पाश्चात्य विद्‌वानोंद्‌वारा प्रस्तुत परिभाषाएँ

2.2.4 हास्य के भेद

2.2.4.1 भारतीय आचार्योंद्‌वारा स्वीकृत भेद

2.3 व्यंग्य का स्वरूप-विवेचन

2.3.1 व्यंग्य का अर्थ

2.3.2 व्यंग्य की परिभाषा

2.3.2.1 भारतीय विद्‌वानों द्‌वारा प्रस्तुत परिभाषाएँ

2.3.2.2 पाश्चात्य् विद्‌वानों द्‌वारा प्रस्तुत परिभाषाएँ

2.3.3 व्यंग्य के प्रकार

2.3.3.1 चमत्कारिक व्यंग्य विनोद (Wit)

2.3.3.2 व्याजोक्ति (Irony)

2.3.3.3 उपहास (Sarcasm)

2.3.3.4 व्याकृति (Buslesque)

2.3.3.5 आक्षेप (Compoon)

2.4 हास्य-व्यंग्य का संबंध एवं पार्थक्य

2.4.1 हास्य और व्यंग्य दो अलग प्रवृत्तियाँ

2.4.2 हास्य और व्यंग्य के उद्देश्य में भिन्नता

2.4.3 परिणाम की दृष्टि से भिन्नता

2.5 एकांकी का उद्भव एवं विकास

2.5.1 'एकांकी' शब्द का अर्थ

2.5.2 उद्भव एवं विकास

2.6 विवेच्य एकांकियों के हास्य-व्यंग्य का स्वरूप

2.6.1 सामाजिक हास्य-व्यंग्य एकांकी

2.6.1.1 'बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ'

2.6.1.2 'अनोखेलाल को ऑफिस का चार्ज'

2.6.1.3 'रंग में भंग'

2.6.1.4 'इन्टरव्यू की तैयारी'

2.6.1.5 'अनोखेलाल का सेवाव्रत'

2.6.2 राजनीतिक हास्य-व्यंग्य एकांकी

2.6.2.1 'इन्टरव्यू : एक चुनाव के उम्मीदवार से'

2.6.2.2 'चूहें'

2.6.3 कौटुंबिक हास्य-व्यंग्य एकांकी

2.6.3.1 'तितली'

2.6.3.2 'नहाने के बहाने'

2.6.3.3 'अनोखेलाल ने नौकर रखा'

2.6.3.4 'अनोखेलाल बीमार पड़ते हैं'

2.6.3.5 'अनोखेलाल चांदनी रात में'

2.6.3.6 'अनोखेलाल खाना बनाते हैं'

2.6.3.7 'अनोखेलाल का विवाह दिन'

❑ निष्कर्ष

द्वितीय अध्याय

''हास्य-व्यंग्य का स्वरूप-विवेचन एवं विवेच्य एकांकियों के हास्य-व्यंग्य का स्वरूप''

❑ प्रास्ताविक -

हास्य-व्यंग्य का स्वरूप-विवेचन करते समय हास्य और व्यंग्य की संकल्पना को भलि-भाँति जान लेना आवश्यक है। हास्य-व्यंग्य अर्थात् हास्य और व्यंग्य से युक्त। वास्तव में 'हास्य' और 'व्यंग्य' दो अलग - अलग संकल्पनाएँ हैं। लेकिन जिस रचना में हास्य के साथ व्यंग्य को भी प्रस्तुत किया गया हो वह रचना हास्य-व्यंग्य रचना नाम से जानी जाती है। हास्य और व्यंग्य का समन्वय 'हास्य-व्यंग्य' कहलता है। एकांकियों के हास्य-व्यंग्य के स्वरूप का विचार करते समय यह भी जरुरी हैं कि पहले एकांकी का अर्थ जान ले। अत: प्रस्तुत अध्याय में हास्य-व्यंग्य के उद्‌भव एवं विकास तथा एकांकी के उद्‌भव एवं विकास को संक्षेप में स्पष्ट करते हुए दोनों के स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

2.1 हास्य-व्यंग्य का उद्‌भव एवं विकास -

आचार्य भरतमुनि ने अपने ग्रंथ 'नाट्यशास्त्र' में पहली बार हास्य-रस संबंधी लिखा है। प्राचीन भारतीय साहित्य में भी 'हास्य' के बारे में थोडा बहुत संदर्भ मिलता है। इसी हास्य का विकास नाट्यकला के द्‌वारा हुआ है और नाट्यशास्त्रियों ने हास्य नवरसों में से एक माना है। उसे उन्होंने रस के रूप में स्वीकार किया। हास्य की व्युत्पत्ति, कारण, भेद - उपभेद आदि के विषय में संस्कृत शास्त्र, ग्रंथों में चर्चा की गई हैं। आचार्य भरतमुनि ने भी अपने ग्रंथ 'नाट्यशास्त्र' में हास्य-रस का शास्त्रीय विवेचन प्रस्तुत किया है। 'अग्निपुराण' में भी रसों के उत्पत्ति संबंधी लिखा गया है। इनके अलावा और भी अनेक आचार्यों ने हास्य - रस का शास्त्रीय दृष्टि से विचार किया हुआ दिखाई देता है।

भक्तिकाल, रीतिकाल, आधुनिक काल आदि में लिखे गए साहित्य में भी थोड़ी बहुत मात्रा में हास्य रस विद्‌यमान है। संत कबीरदास ने कुप्रथाएँ और रुढ़ीगत अमानवीय परंपराओं को तोड़ने हेतु हास्य-व्यंग्य जैसे कटु - उक्तियों का उपयोग किया है। इसके भी आगे

चलकर हास्य-व्यंग्य का प्रयोग विरोधी शासकों के खिलाफ लोगों को भड़काने के लिए भी किया गया है। भारतेंदु जी ने अँग्रेजी शासन के विरोध में जन-जागृति करने के लिए तथा दूषित तत्वों की खिल्ली उड़ाने के लिए हास्य-व्यंग्य का प्रयोग किया। समकालीन साहित्यकारों ने भी गद्य-पद्य में हास्य-व्यंग्य का उपयोग किया है।

स्वातंत्र्यपूर्व काल गांभीर्यपूर्ण और देशप्रेम या राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत भरा था। अत: साहित्यकारों का ध्यान हास्य की ओर नहीं जा सका था। आधुनिक काल के शुरूआत में हिंदी साहित्यकार हास्य की ओर अधिक आकर्षित हो गए थे लेकिन स्वातंत्र्योत्तर काल की मूल्यहीनता, विसंगतियों, विषमताओं के कारण यह हास्य, व्यंग्य में परिवर्तित होता गया है। इस काल में समाज में असंतोष फैला हुआ था। इस काल में हास्य से अधिक व्यंग्य को महत्त्व प्राप्त होने लगा और इसके कारण हास्य का उपयोग व्यंग्य के लिए होने लगा। अत: स्वतंत्रता के बाद हिंदी साहित्य में हास्य की मात्रा कम हो गई और व्यंग्य का प्रमाण बढ़ता गया। समाज में फैलती अराजकता, विसंगतियों तथा राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक स्थितियों में आए प्रतिकूल बदलाव का प्रतीक व्यंग्य का उद्‌भव है। इन बदलावों ने ही व्यंग्य को जन्म दिया है।

हास्य तथा व्यंग्य का प्रयोग बहुत पहले से भारतीय शास्त्रों, ग्रंथों आदि में दिखाई देता है। वेदों, शास्त्रों से लेकर कबीर जैसे संतों आदि के साहित्य से होता हुआ आधुनिक काल तक हास्य तथा व्यंग्य का प्रवास चल रहा है। समाज में स्थित पाखंडियों, विसंगतियों का निरंतर विरोध किया गया है। स्वातंत्र्यपूर्व काल की अपेक्षा स्वातंत्र्योत्तर काल में व्यंग्य का विकास होता हुआ दिखाई देता है। आज बहुत से साहित्य-विधाओं में हास्य-व्यंग्य का प्रयोग दिखाई देता है, भले ही उसका प्रमाण अंशत: ही क्यों न हों।

2.2 हास्य का स्वरूप-विवेचन -

हास्य एक प्रकार की औषधी ही है जो मनुष्य के सभी संकटों का उपचार है। जो मनुष्य हमेशा हँसता है, उसे जीवन के संकटों का कोई डर नहीं होता। हास्य मनुष्य को दैनंदिन तणावयुक्त जीवन से दूर ले जाता है। हँसना मनुष्य का स्वाभाविक लक्षण है। जो मनुष्य जीवन की विसंगतियों पर भी हँसना सीख जाता है, वह जीवन के सभी समस्याओं का आसानी

से सामना कर सकता है। हँसना दो तरह का हो सकता है, दूसरों पर हँसना और अपने आप पर हँसना या फिर सुयोग्य कारण पर हँसना और बिना वजह के भी हँसना। जब कोई भी बात न घटीत हुई हो कि जिससे हँसी आए और फिर भी कोई हँसता ही रहे तो लोग उसे पागल या सरफिरा कहेंगे। इसके विरूद्ध अगर कोई व्यक्ति बड़े से बड़ा विनोद हो जाने पर भी हँसी की लकीर भी चेहरे पर नहीं लाता वह बहुत ही खुसट या निरस व्यक्तियों में से एक जाना जायेगा वह आदमी जवानी में भी बूढ़े की तरह लगेगा। साथ ही साथ यह बात भी महत्त्वपूर्ण है कि कोई व्यक्ति दूसरे पर हँसता है लेकिन क्या वह अपने आप पर हँस सकता है? - जिस आदमी ने अपने आप पर हँसना सीखा वह निश्चित ही जीवन की कठिनाईयों से अपना उज्ज्वल मार्ग ढूँढ़ निकालता है।

मनुष्य के जीवन में हास्य महत्तवपूर्ण है। दो-तीन महिने के शिशु की हँसी तथा रोने में भी कोई व्यंग्य नहीं होता। वह केवल अपनी सुरक्षा-असुरक्षा से शिशु में उत्पन्न भावों का द्योतक होता है। हँसना किसे अच्छा नहीं लगता? - हँसी तो मनुष्य के सुख की प्रतिमा होती है। मनुष्य में हास्य-प्रवृत्ति उसके निर्माण से चली आ रही है। यह हास्य प्रवृत्ति इतनी पुरानी है कि वह भाषा के निर्माण से पहले भी मनुष्यों में व्याप्त थी और आज भी चलती आ रही है। आज भी जब दो परिचित अगर कहीं मिल जाते हैं तो सब से पहले हँसी से ही (भले वह स्मित हास्य हों) एक-दूसरे का स्वागत करते हैं।

श्री. बरसानेलाल चतुर्वेदी तो श्रृंगार रस को रसराज माननेवालों के मत का खंडन करते हुए कहते हैं - "श्रृंगार रस के समर्थकों का यह भी कथन है कि साधारणत: उसकी व्याप्ति समस्त सजीव जगत में पाई जाती है जब कि हास्य-रस केवल मनुष्य जाति तक ही सीमित है। किन्तु थोड़ा विचार करने से स्पष्ट हो जायेगा कि यह तो हास्य-रस के रसराज होने का सब से बड़ा कारण है।"[1]

हास्य रस के रसराज होने का और एक कारण यह भी बताया जाता है कि हास्य रस का अनुभव व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक रहता है। जब कि श्रृंगार रस कुछ निश्चित समय तक ही साथ रहता है। रस की श्रेष्ठता को लेकर विद्वानों में मतभिन्नता दिखाई देती है।

---

1. डॉ.बरसानेलाल चतुर्वेदी - हिंदी साहित्य में हास्य रस, पृष्ठ - 32

इससे यहीं कहा जा सकता है कि हास्य रस रसराज बने या ना बने लेकिन वह श्रृंगार रस से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। जिस प्रकार श्रृंगार रस का महत्त्व है, उसी तरह हास्य रस का भी महत्त्व है। हास्य मनुष्य के जीवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह बिघडते काम भी बनाने की ताकद रखता है। एक प्रसन्न हसत-मुख व्यक्ति को देखकर कोई भी उसकी बात सुनने के लिए उत्सुक रहेगा। इसके विपरीत अगर कोई त्रस्त भाव लिए हुए, चेहरे पर बौरियत को लिए हुए लोगों के सामने जायेगा तो कोई भी उससे छुटकारा पाने की या उसे टालने की ही कोशिश करेगा। हास्य का निर्माण तभी होता है या हास्य निर्मिति करानेवाला साहित्य तभी लिखा जाता है जब समाज स्वस्थ, सामान्य और ठीक होता है।

काका हाथरसी हास्य के बारे में कहते हैं - ''व्यंग्य में यदि हास्य नहीं होगा तो वह कोतवाल का हंटर हो जायेगा। उनका कहना है कि, इससे हमें फायदा भी होता है क्योंकि हास्य मिश्रित व्यंग्य सीधा प्रहार करता है और उससे चोट नहीं लगती।''[1] इस प्रकार से हास्य के स्वरूप को देख सकते हैं। हास्य के महत्त्व को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता। अब तक उपेक्षित हास्य का महत्त्व अब स्पष्ट हो गया है।

2.2.1 हास्य रस का शास्त्रीय-विवेचन :

हास्य नौ रसों में से एक रस है। मानव के मन में हर समय विभिन्न प्रकार के भाव उत्पन्न होते रहते हैं। इन स्थायी भावों के कारण ही रस की निर्मिति होती है। इन रसों में से ही एक रस 'हास्य' है। इस रस के देवता शंकर के गण माने जाते हैं तथा इसका वर्ण श्वेत है। भय, शोक जुगुप्सा, रति आदि भावों की तरह हास भाव भी मानव मन में उत्पन्न होनेवाला एक भाव है। यह सभी भाव व्यक्ति के साथ जीवन भर के लिए जुड़े रहते हैं। भरतमुनि के 'नाट्यशास्त्र' में इसका सर्वप्रथम नियमबद्ध उल्लेख मिलता है।

हास्य 'रस' का एक प्रकार है, तो उसका रस की दृष्टि से शास्त्रीय-विवेचन करना सुसंगठित होगा। आचार्य भरतमुनि ने अपने 'नाट्यशास्त्र' ग्रंथ में रस का सूत्र प्रस्तुत किया है। उन्होंने लिखा है - ''विभावानुभाव व्यभिचारी संयोगाद्रस निष्पत्ति:।'' अर्थात् - विभाव, अनुभाव, संचारीभाव आदि के संयोग से ही रस की निर्मिति होती है। हास्य रस की निर्मिति में यह भाव किस प्रकार से कार्य करते हैं, इसके बारे में संक्षेप में जानकारी दी है।

---

1. डॉ. श्यामसुंदर घोष - व्यंग्य विवेचन, पृष्ठ - 89 से उद्धृत

2.2.1.1 हास्य का स्थायीभाव :-

जो भाव दीर्घकाल तक मन में व्याप्त रहता है और काव्य, नाटक आदि में आद्योपांत उपस्थित रहता है। अन्य भावों की तुलना में यह भाव प्रभावशीलता और प्रधानता में श्रेष्ठ स्थान रखता है। साथ ही जिसमें विभाव आदि से संबंधित हो कर रस रूप में परिणत होने की शक्ति रहती है, उसे 'स्थायीभाव' कहा जाता है।

मनुष्य जन्म से ही हास्यप्रिय प्राणी है, कोई सिर फिरा ही होगा जिसे हँसना अच्छा नहीं लगता। अत: हर मनुष्य के मन में 'हास' स्थायीभाव होता है जो प्रेरणा मिलते ही हास्य रस में परिणत हो जाता है। भरतमुनि ने सब भावों में से स्थायीभाव को सर्वश्रेष्ठ मानते हुए लिखा है - ''यथा नाराणां नृपति: शिष्यनां च यथा गुरु:।

एवंही सर्वभावनां भाव:स्थाय महानिह॥''[1]

अर्थात् - जैसे मनुष्यों में राजा, शिष्यों में गुरु उसी प्रकार सब भावों में स्थायीभाव श्रेष्ठ है।

आचार्य विश्वनाथ के अनुसार वाणी, वेश, भूषण आदि की विपरीतता से जो चित्र का विकास होता है वहीं हास कहलाता है।

2.2.1.2 हास्य के विभाव :-

विभाव शब्द के लिए कारण, निमित्त, हेतु आदि पर्यायवाची शब्द हैं - ''विभाव: कारणं निमित्त हेतुरीति पर्याया:।''[2] व्यक्ति या वस्तुमात्र में देखा गया बदलाव, विपरीतता, व्यंग्य दर्शन, परचेष्टा अनुकरण, असंबद्ध प्रलाप, वक्रोक्ति आदि हास्योत्पत्ति के कारण हैं। विश्वनाथ ने भी अपने 'साहित्यदर्पण' में लिखा है -

''विकृताकारवाक्चेष्टं यमालोक्य हसेज्जन:।

तमत्रालम्बनं प्राहुस्तच्चेष्टोद्दीपनं मतम्॥''[3]

अर्थात् - जिसकी, विकृति-आकृति, वाणी, वेश तथा चेष्टा आदि को देख कर लोग हँसे तब यहाँ वह व्यक्ति आलंबन और उसकी चेष्टाएँ उद्दीपन विभाव कहलाते हैं।

---

1. डॉ.बरसानेलाल चतुर्वेदी - हिंदी साहित्य में हास्य रस, पृष्ठ - 25 से उद्धृत
2. वही, पृष्ठ - 25
3. डॉ. सत्यव्रत सिंह - श्रीविश्वनाथकविराजप्रणीत: साहित्यदर्पण:, तृतीय परिच्छेद, पृष्ठ - 255

2.2.1.3 **हास्य के अनुभाव :-**

जो भाव स्थायीभावों का अनुभव कराने में समर्थ हो उसे 'अनुभाव' कहा जाता है।

अमरकोश कार के अनुसार 'अनुभाव शब्द का अर्थ है - ''अनुभावो भाव बोधक:'' अनुभाव वास्तव में शारीरिक चेष्टाएँ ही हैं, जो स्थायीभाव को उद्दीप्त करती है। अनुभाव रस उत्पन्न हो जाने की सूचना भी देते हैं और रस की पुष्टि भी करते हैं। आ. विश्वनाथ ने हास्य रस के अनुभाव इसप्रकार बताए हैं - ''अनुभावोऽक्षिसङ्कोचवदनस्मेरताद्य:।''[1] हास्य रस की दृष्टि से देखा जाए तो नयनों का मुकुलित होना, मुख का विकसित होना इसके अनुभाव है।

2.2.1.4 **हास्य के संचारीभाव :-**

अस्थिर मनोविकार या चित्तवृत्तियाँ संचारीभाव कहलाती हैं। यह भाव किसी एक ही स्थायीभाव के साथ स्थिर नहीं रहते। इनकी संचरनशील प्रवृत्ति के कारण ही ये संचारी भाव, व्यभिचारी भाव या अस्थिर भाव आदि नाम से जाने जाते हैं क्योंकि यह भाव कुछ क्षण के लिए प्रकट होकर फिर से स्थायीभाव में समा जाते हैं।

संचारी भाव एक मनोविकार कहा जा सकता है। यह कोई शारीरिक धर्म नहीं है। इसलिए मनोविकारों की कोई निश्चित संख्या निर्धारीत नहीं है। फिर भी संचारी भावों की संख्या 33 निर्धारीत की गई है।

निष्कर्षत : हम कह सकते हैं कि हास्य रस का स्थायीभाव हास है। लोगों को हँसने के लिए प्रवृत्त करनेवाली किसी वस्तूविशेष या व्यक्ति विशेष की चेष्टाएँ हास्य रस का 'विभाव' कहलाती हैं। स्थायीभाव का अनुभव करानेवाला भाव 'अनुभाव' कहलाता है और संचारीभाव वह है जो कभी स्थिर नहीं रहते अनुकूल परिस्थिति में उभर आते हैं और फिर से स्थायीभाव में लीन हो जाते हैं।

---

1. डॉ. सत्यव्रत सिंह - श्रीविश्वनाथकविराजप्रणीत: साहित्यदर्पण:, तृतीय परिच्छेद, पृष्ठ - 255

2.2.2 'हास्य' का अर्थ :

'मानक हिंदी कोश' में हास्य शब्द का अर्थ इस प्रकार दिया गया है - ''हास्य -वि. (सं. ✓ हस् + व्यत्) 1. हास्य संबंधी । हास की। 2. (काम या बात) जिससे लोग प्रसन्न होकर हँस पड़े। जिसमें लोगों को हँसाने की योग्यता या शक्ति हो। 3. जिस पर लोग व्यंग्यपूर्वक हँसते हों। जिसकी हँसी उड़ाई जाती हो या उड़ाई जाए। उपहास के योग्य। पु. 1. हँसने की क्रिया का भाव। हँसी। 2. साहित्य में, नौ स्थायी भावों या रसों में से एक जो श्रृंगार रस से उत्पन्न और शुभ्र वर्ण का माना गया है तथा जिसके देवता 'प्रमथ' अर्थात् शिव के गण कहे गए हैं।

विशेष : हास्य रस का स्थायी भाव हास कहा गया है और आचार-व्यवहार तथा वेश-भूषा की उपयुक्तता, असंगति, भद्दापन, विकृति, धृष्टता, चपलता, प्रलाप, व्यंग्य आदि इसके विभाव माने गए हैं। आलस्य, उपहित्थ, तंद्रा, निद्रा. असूया आदि इसके व्यभिचारी भाव कहे गए हैं। यह श्रृंगार, वीर और अद्भुत रसों का पोषक माना गया है। 3. दिल्लगी। ठट्ठा। मजाक। 4. उपेक्षा और निन्दा से युक्त हँसी। उपहास।''[1]

'नालंदा विशाल शब्द सागर' के अनुसार इसका अर्थ इसप्रकार दिया गया है - ''हास्य (वि) (सं) - 1 - हँसने के योग्य। जिस पर लोग हँसे। 2. उपहास के योग्य। (संज्ञा पु.) 1. हँसने की क्रिया या भाव। हँसी। 2. नौ स्थायी भावों या रसों में से एक, जिसमें हँसी की बाते होती हैं। 3. दिल्लगी। ठट्ठा। मजाक।''[2]

❑ 'हास्य' का उच्चारण :

'हिंदी उच्चारण कोश - (A Dictionary of Hindi Pronounciation) में हास्य उच्चारण संबंधी लिखा है - ''हास्य - हास्स्य् ha: ssy 'हास्-स्य(स)' ha: s- sya (s)''[3]

2.2.3 हास्य की परिभाषा :

हास्य की व्याख्या करने का प्रयास अनेक आचार्यों ने किया। सभी विद्वानों ने अपने-अपने विचारानुसार हास्य की परिभाषा प्रस्तुत की है।

---

1. सं. रामचन्द्र वर्मा - मानक हिंदी कोश (पाँचवा खंड), पृष्ठ - 546
2. सं. श्री.नवल जी - नालंदा विशाल शब्द सागर, पृष्ठ - 1541
3. सं. भोलानाथ तिवारी - हिंदी उच्चारण कोश, पृष्ठ - 454

मनुष्य जब हँसता है तब उसका मन प्रसन्न हो उठता है। उसके चेहरे पर एक रौनक छा जाती है। बालेंदु तिवारी कहते हैं - ''हँसी की इस अवस्था में यदि किसी हँसते हुए व्यक्ति से पूछा जाए कि हँसी क्या है, हास्य की परिभाषा क्या है, तो निश्चय ही उसके निपरी हुए दाँत बंद हो जायेंगे और हँसी बंद हो जायेगी। हँसना तो सबके लिए आसान है, लेकिन अचानक हास्य की परिभाषा दे डालना सहज सम्भव नहीं है।''[1] तिवारी जी का यह कथन सौ प्रतिशत सही है। किसी भी बात का व्यवहार में प्रयोग तो आसानी से किया जा सकता है, लेकिन हर एक बात की परिभाषा करना उतना ही कठिन होता है। हम सभी हँसना जानते हैं लेकिन उसकी परिभाषा बताने के समय हँसी गायब हो जाती है और विचारचक्र शुरू हो जाता है। परिभाषा स्पष्ट करते हुए वह ज्यादा लंबी या संक्षिप्त न बने इसका ध्यान रखना पड़ता है। इन दोषों को अतिव्याप्ति और अव्याप्ति के नाम से जाना जाता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि, उस विशिष्ट संकल्पना को हम बिल्कुल ही परिभाषित नहीं कर सकते तब वहाँ 'असंभव दोष' हो जाता है। परिभाषा जब अपेक्षित विस्तार में स्पष्ट नहीं होती तब वह 'अव्याप्ति दोष' कहलाता है और जब परिभाषा अपेक्षा से ज्यादा विस्तार से प्रस्तुत की गई हो, तब 'अतिव्याप्ति दोष' होता है। इन दोषों से मुक्त किसी वस्तु का समग्र स्वरूप व्यक्त करनेवाला वाक्य ही उचित परिभाषा कहलाता है। जो परिभाषा सर्वमान्य हो, सटीक हो ऐसी परिभाषाओं का ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में अभाव है। किसी भी वस्तू के संबंध में विद्वानों का एक मत नहीं होता है। प्रत्येक की अपनी अलग विचारसरणी होती है। उस विचारों के अनुसार हर एक की परिभाषाएँ भी अलग-अलग हो सकती हैं।

'हास्य' को परिभाषित करने का प्रयास भी अनेक विद्वानों ने किया है। भारतीय चिंतना में हास्य का चिंतन सूक्ष्म दृष्टि से नहीं किया गया। उसमें गांभीर्य का भी अभाव दिखाई देता है। स्वातंत्र्योत्तर काल में इस दिशा में प्रयास किए गए हैं। इसके अलावा आचार्य भरतमुनि द्वारा प्रस्तुत की गई विवेचना का ही प्राधान्य रहा है।

2.2.3.1 संस्कृत आचार्योंद्वारा प्रस्तुत परिभाषाएँ :-

संस्कृत आचार्यों ने हास्य की परिभाषा करने का प्रयास किया है -

---

1. सं.बालेन्दु तिवारी - हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ - 17

आ. भरतमुनि ने हास्य को श्रृंगार रस से उद्‌भूत माना है। इसका तात्पर्य यह है कि, हास्य रस का उद्रेक आकार, वेश, आचरण, कथन, शब्द, अलंकार आदि की विकृति द्‌वारा होता है। यह विकृतियाँ किसी में भी हो चाहे वह वक्ता हो, अभिनेता हो उनके द्‌वारा किया गया वर्णन या संकेत सहृदय के मन में (गुदगुदी) उल्हास पैदा कर दे तो उस अवस्था को हास्य रस की भूमिका समझना चाहिए।

धनंजय ने भी हास्य-विवेचन के लिए आ.भरतमुनि के मत का ही अनुसरण किया है -

"विकृताकृतिवाग्वि शेषैरात्मनो ऽ थ परस्य वा।
हास: स्यात् परिपोषो ऽ स्य हास्यस्त्रिप्रकृति स्मृत: ॥"[1]

इनके अनुसार अपनी अथवा पराई विकृत आकृति वाणी की विशेषता से जो हास उत्पन्न होता है, उसी का फल हास्य रस है। उसी प्रकार वाणी, वेश आदि के विकार पर बल दिया है। 'साहित्यदर्पण' में लिखा है -

"रतिर्मनोऽनुकूलेऽथै मनस: प्रवणायितम्।
वागादिवैकृतैश्चेतोविकासो हास इष्यते ॥"[2]

संस्कृत आचार्यों के इन विचारों को हिंदी के मध्यकालीन कवियों तथा आचार्यों ने पूरी तरह से ग्रहण किया है। यह विचार श्रृंगार पर केंद्रित होने के कारण केशव, रसनिधि, मतिराम, देव इत्यादि ने हास्य की गंभीर रूप से विवेचना नहीं की है। 'जगद्‌विनोद' के रचनाकार पद्‌माकर ने इसी आधार पर हास्य की चर्चा की है -

"थाई जाको हास हैं, वहै हास्यरस जाति।
तहँ कुरूप कूदब कहब, कछु विभाव ते मानि ॥
भेद मध्य अरू ऊँच स्वर, हँस बोई अनुभाव।
हरष चपलता और हू, तहँ संचारी भाव ॥"[3]

अठरहवीं शती में भारतीय विचारकों ने इतना गंभीर चिंतन नहीं किया। जहाँ विचारकों ने हास्य के बारे में थोड़ा-बहुत हास्य का विचार किया है, वहाँ इन्होंने हास्य को

---

1. हजारी प्रसाद द्‌विवेदी - नाट्‌यशास्त्र की भारतीय परंपरा और दशरुपक, पृष्ठ - 309
2. डॉ. सत्यव्रत सिंह - श्रीविश्वनाथकविराजप्रणीत: साहित्यदर्पण:, तृतीय परिच्छेद, पृष्ठ - 225
3. आ.विश्वनाथ प्रसाद मिश्र - पद्‌माकर पंचामृत, पृष्ठ - 211

विकृति के साथ जोड़ने का प्रयास किया है। विचारकों की इसी प्रवृत्ति के कारण शुद्ध हास्य रस की रचनाओं का भारतीय साहित्य में अभाव रहा है। फलत: जिसप्रकार ज्ञान-विज्ञान के अन्य क्षेत्र में धीरे-धीरे विकास होता गया, उसी प्रकार हास्य-चिंतन की दृष्टि से भी धीरे-धीरे परिवर्तन हुआ है। पाश्चात्य संपर्क के कारण भारतीयों के सामने हास्य का स्वरूप, महत्त्व आदि के विषय में नया दृष्टिकोण भारतीयों के सामने स्पष्ट हो गया। साथ ही हास्य की नई परिभाषाएँ भी प्रस्तुत की गई हैं।

2.2.3.2 भारतीय चिंतकोंद्वारा प्रस्तुत परिभाषाएँ :-

1) आ. रामचंद्र शुक्ल ने हास्यरस के हास भाव को सुख प्रदान करनेवाला माना है और उसकी विस्तृत व्याख्या करने का प्रयास किया है - "हास यों तो केवल मन का एक वेगमात्र है, पर भावों में जिस हास को स्थान दिया गया है, वह ऐसा है जिसके आश्रयगत होने पर श्रोता या दर्शक को भी रसरूप में हास की अनुभूति होती है। वह आलंबन प्रधान होता है। योंही प्रसन्नता के कारण (जैसे शत्रु के विरूद्ध अपनी सफलता) जो हँसी आती है, वह भाव की कोटि में नहीं, वह मन की उमंग या शरीर का व्यापार मात्र है। उसके प्रदर्शन से श्रोता या दर्शक के हास्य में हास की अनुभूति नहीं हो सकती।"[1] आ. रामचंद्र शुक्ल के कथन से यह स्पष्ट होने में देर नहीं लगती है कि भारतीय विचारकों ने धीरे-धीरे यह स्वीकार किया है कि हास्य केवल विकृत वाणी, वेश आदि का प्रदर्शन मात्र नहीं है।

2) एस.पी. खत्री ने हास्य का सर्वाधिक विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया है लेकिन इसके बावजूद भी हास्य की निश्चित परिभाषा करने में वे असफल रहे हैं। इन्होंने हास्य का संबंध मानवी विचारधाराओं से माना है - "हास्य की विशिष्ट आत्मा का विचरणक्षेत्र मानवी विचारक्षेत्र रहा है और इसी क्षेत्र में वह फूले-फलेगी। इस आत्मा से प्रेम करने के तथा उसे रूचिकर बनाने के लिए हमें जीवन से प्रेम करना पड़ेगा। हास्य हमारे इसी मानवी अनुसंधान का सहायक है।"[2] लेकिन एस.पी. खत्री के इस कथन मात्र को परिभाषा नहीं कहा जा सकता।

---

1. आ. रामचंद्र शुक्ल - रसमीमांसा, पृष्ठ - 195
2. डॉ. एस.पी. खत्री - हास्य की रूपरेखा, पृष्ठ - 32

3) डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी ने अपने 'हिंदी साहित्य में हास्य रस' नामक शोध निबंध में हास्य के विषय में लिखा है लेकिन हास्य की एक निश्चित परिभाषा देने में वे भी नाकामयाब ही रहे हैं।

4) व्यास जी के हास्य निबंध 'व्यास अभिनंदन ग्रंथ' में सावित्री सिन्हा ने हास्य को परिभाषित करते हुए लिखा है - ''किसी घटना, क्रिया, परिस्थिती, लेख या विचारों की अभिव्यक्ति में निहित वह तत्त्व जो उनकी असम्बद्धता, बेढंगेपन आदि के कारण मनुष्य के मन में एक विशेष प्रकार का आनंद या मजा उत्पन्न करता है - वह हास्य या ह्यूमर है।''[1] इस परिभाषा में फिर से हास्य पर विकृतियों का आरोप किया गया है।

5) परिभाषा में हास्य के स्वभाव का विवेचन सरोज खन्ना ने किया है। उन्होंने लिखा है - ''हास्य उल्लासमय एवं सुखमय जीवन की सहज अभिव्यक्ति है। स्वस्थ हृदय का स्वाभाविक उच्छलन है, स्वच्छ एवं निर्मल - किसी भी प्रकार की कटूता एवं दंश से सर्वथा रहित।''[2] यह परिभाषा हास्य के स्वभावगत कारणों को स्पष्ट करती है।

6) डॉ. धर्मस्वरुप गुप्त ने लिखा है कि, ''हास्य वह मानसिक स्थिति है, जब व्यक्ति निजी अनुभवों को असंगति एवं बाह्य पदार्थों में नूतनता अथवा विकृति का अनुभव करता हुआ आनंद की अभिव्यक्ति करता है।''[3]

7) तिरछी रेखायें (1972) 'व्यंग्य क्यो? कैसे? किस लिये?' में हरिशंकर परसाई हास्य की गहराई तक जाने का प्रयास करते हुए कहते हैं - ''आदमी हँसता क्यों है? परम्परा से हर समाज की कुछ संगतियाँ होती हैं, सामंजस्य होते हैं। जब यह संगति गड़बड़ होती है तब चेतना में चमक पैदा होती है। इस चमक से हँसी भी आ सकती है और चेतना में हलचल भी पैदा हो सकती है।''[4]

इसप्रकार हरिशंकर परसाई ने हास्य को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इन्होंने विसंगति को हास्य का कारण कहा है।

---

1. डॉ.स्मिता चिपलूणकर - हिंदी के प्रमुख व्यंग्यकार, पृष्ठ - 14
2. सरोज खन्ना - हिंदी कविता में हास्य रस, पृष्ठ - 32
3. डॉ.बालेन्दु शेखर तिवारी - हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ - 21से उद्धृत
4. डॉ. स्मिता चिपलूणकर - हिंदी के प्रमुख व्यंग्यकार, पृष्ठ - 14

8) डॉ. गुलाबराय जी ने हास्य की परिभाषा प्रस्तुत करने का प्रयास किया है लेकिन कुछ सीमा तक इन्होंने भी विकृति को स्वीकार किया है - ''जब विकृति भयानक स्थिति में रहती है और अनिष्ट की सीमा तक नहीं पहुँचती तब आश्रय को एक प्रकार का सुख होता है और वह हास्य में परिणत हो जाता है।''[1]

विविध भारतीय चिंतको, विचारकों द्वारा प्रस्तुत की गई उपर्युक्त परिभाषाओं को देखने पर हम यह कह सकते हैं कि इन परिभाषाओं में से कोई भी परिभाषा हास्य को परिपूर्ण रूप से विश्लेषित नहीं कर सकी है। हास्य की संकल्पना इनमें से किसी भी परिभाषा से स्पष्ट नहीं हो सकी है। वैसे देखा जाए तो आरंभ से ही भारतीय विचारकों ने हास्य चिंतन को इतना महत्त्व नहीं दिया है जितना गंभीर विषयों के चिंतन को दिया है। उस दृष्टि से आरंभिक काल में गंभीर भारतीय चिंतन परंपरा हास्य के प्रतिकूल ही रही है। चिंतकों ने हास्य को निम्न स्तर का मान कर उसे जीवन-दर्शन की गंभीरता के बीच हास्य को मीमांसा के योग्य नहीं समझा। इसी अल्प चिंतन और विचार के परिणाम स्वरूप ही हास्य का संबंध विकृति से जोड़कर इसके विषय में अधिक चर्चा नहीं की गई। आधुनिक भारतीय चिंतकों ने भी पाश्चात्य विचारों से प्रभावित होकर किसी आधुनिक या प्रगत विचारों से हिंदी को लाभान्वित नहीं किया।

2.2.3.3 पाश्चात्य विद्वानोंद्वारा प्रस्तुत परिभाषाएँ :-

भारतीय चिंतकों की तुलना में पाश्चात्य चिंतकों ने 'कामदी' और हास्य का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया है। युरोपीय साहित्य में 'त्रासदी' की तुलना में 'कामदी' का विषय-विवेचन अत्यल्प मात्रा में किया गया है। लेकिन पश्चिमी विद्वानों ने हास्य को परिभाषित करने का यथासंभव प्रयास किया है। प्रारंभिक पाश्चात्य विचारकों ने भी 'कामदी' से हास्य को अलग नहीं किया है। प्लेटो और अरस्तू दोनों ने भी स्वीकार किया कि, 'कामदी' में असंगति देखकर आनंद की अनुभूति होती है - 1) ऑरिस्टॉटल ने हास्य को परिभाषित करते हुए लिखा है - ''कामदी को देखकर हमारी आत्मा कष्ट और आनन्द की मिश्रित अनुभूति प्राप्त करती है।''[2] (''At comedy the soul experiences a mixed feelings of pain and pleasure'')

यह कथन दोषपूर्ण है क्योंकि इसके आधार पर यह अनुमान निकलता है -

---

1. डॉ. गुलाबराय - सिद्धांत और अध्ययन, पृष्ठ - 142
2. डॉ. बालेन्दु तिवारी - हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ - 22

हास्य किसी हीन व्यक्ति को निर्दिष्ट कर उस पर हँसना है। ऐसी स्थिति में हास्य केवल हास्य न रहकर वह दर्प और घृणा से युक्त हो जाता है।

2) 'सिसेरो' ने इस बात को मानते हुए अरस्तू के विचारों का अनुसरण किया है। इनके अनुसार उत्कृष्ट हास्य वहीं है, जिसमें आलंबन के प्रति दया और करुणा हो।

3) टॉमस हॉब्स ने इसी विचारधारा को अपनी भाषा में प्रस्तुत किया है - "हास्य अपने गौरव की अनुभूति से उद्‌भूत प्रसन्नता का प्रकाशन है।"[1]

(Thomas Hobbes : "The passion of caughter is nothing else put sudden glory arising from a sudden comparison with the infirmity of others.")

लेकिन टॉमस हॉब्स के इस कथन के अनुसार, मनुष्य में सदा यही प्रवृति विद्‌यमान नहीं रहती कि वह औरों की बुराई देखकर आनंद का अनुभव करें।

4) जॉर्ज मेरेडिथ ने भी हॉब्स के विचारों पर अपनी सहमती दर्शायी है। मेरेडिथ के अनुसार, "हास्य की उत्तमता के लिए आलंबन के प्रति करुणा का होना अनिवार्य है - ... अपनी अभिव्यक्ति में करूणा का भाव रखें, हास्य की भावना आप में जागृत हो जायेगी।"[2]

(George Meredith : "..... pity him as much as you expose it is a spirit of humour that is moving you.")[2]

सहानुभूतिपूर्ण परिहास को ही मेरेडिथ ने हास्य माना है।

5) 'सटायर इन विक्टोरियन नावेल' (लंदन 1920) में एफ.टी. रसेल ने हास्य की परिभाषा देते हुए इसे मनोरंजन की दृष्टि से जीवन का बौद्‌धिक चिंतन तथा संवेग की दृष्टि से जीवन की कुरूपताओं के प्रति हर्षपूर्ण अभिव्यक्ति कहा है। इन्होंने हास्य की विस्तृत परिभाषा प्रस्तुत की है - "वस्तूत: हम हास्य को यह कह कर परिभाषित कर सकते हैं कि, मनोरंजन की दृष्टि से यह बुद्‌धित: जीवन चिंतन है और संवेग की दृष्टि से विचारक आँखों के सामने आनेवाली कुरूपताओं की हर्षपूर्ण अभिव्यक्ति है मगर हम इस पर सर्वथा अधिपत्य नहीं प्राप्त कर सकते,

---

1. डॉ. बालेंदु तिवारी - हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ - 22 से उद्‌धृत
2. वही, पृष्ठ - 22

जैसा कि हम अन्य आनंदों एवं कष्टों में किया करते हैं।''[1] ("We may, it is true, define humour by saying that intellectually it is contemplation of life from the angle of amusement and emotionally a joyous effervecence over the absurdities in life ever present to the discerning eye, but we can never quite capture it, any more than pleasures or tragedy.")

लेकिन यह परिभाषा केवल हास्य के स्वभाव से ही परिचित कर पाई है, इसे हास्य की उत्तम परिभाषा नहीं कहा जा सकता। हास्य वह है - जो मन को प्रफुल्लित करता है, व्यक्ति के रोम-रोम में हर्ष का संचार कर देता है। जिसके कारण व्यक्ति की मानसिकता, वर्तन, मुख पर अलौकिक तेज झलक जाता है। फिर भी हास्य के विषय में उपर्युक्त विचारों को देखते हुए हम कह सकते हैं कि, हास्य को सुयोग्य परिभाषा के सूत्र में बाँधना कठिन कार्य है।

2.2.4 हास्य के भेद :

वैसे देखा जाए तो हास्य मात्र हास्य होता है। हास्य की भावना मूलत: एक ही है लेकिन उसमें दृष्टिकोण के अनुकूल अंतर आ जाता है। यदि हम किन्ही दो अलग-अलग उम्र या अलग-अलग क्षेत्र से संबंधित व्यक्तियों के हास्य को देखेंगे तो उसमें भेद दिखाई देगा। एक स्त्री का सलज्ज हास्य और एक विद्वान का हास्य इसमें फर्क दिखाई देगा। उसी के साथ विजय का आनंद व्यक्त करता हुआ हास्य और एक शिशु का स्वाभाविक हास्य इसमें बहुत अंतर है। हास्य का विभाजन वैसे बहुत से आधारों पर किया गया है, जैसे हास्य का स्वभाव के अनुसार विभाजन, शरीरानुसार भेद, आश्रयानुसार भेद, जाति के आधार पर भेद आदि के आधारपर विद्वानों ने हास्य के भेद बताए हैं। भारतीय आचार्यों और पाश्चात्य विद्वानों ने अपने अपने चिंतन से हास्य के भेद स्पष्ट किए हैं।

---

1. डॉ. बालेन्दु तिवारी - हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ - 24

2.2.4.1 **भारतीय आचार्यों द्वारा स्वीकृत भेद :-**

1) हास्य के स्वभावानुसार तीन भेद किए गए हैं -

(1) उत्तम (2) मध्यम (3) अधम

2) शरीरानुसार हास्य के भेद -

हास्य के शरीरानुसार छ़ह भेद किए गए हैं - इन भेदों के विशेषताओं की चर्चा भी भरत आदि आचार्यों ने की है।

1) स्मित हास्य : इसमें गालों के निचले भाग पर हँसी की हलकी सी लकीर रहती है आँखे कुछ विकसित होती है। निचला ओंठ हिलने लगता है लेकिन दाँत नहीं दिखाई देते। दृष्टि कटाक्षपूर्ण हो जाती है और इन सभी कारणों से चेहरे पर एक माधुर्य छा जाता है।

2) हसित हास्य : ऐसी हँसी में मुख और नेत्र अधिक प्रसन्न दिखाई देते हैं। गालों पर भी हास्य स्पष्ट दिखाई देता है और दाँत कुछ-कुछ दिखाई देते हैं।

3) विहसित हास्य : आँखों और गालों का संकुचित होना, धीमी हँसी की आवाज के साथ धीरे-धीरे चेहरे पर लालीमा का झलकना विहसित हास्य का लक्षण है।

4) उपहसित हास्य : उपहसित हास्य में नथुनों का फूल जाना, दृष्टि में कुटिलता आ जाना और कंधे-सिर आदि का संकुचित हो जाना आदि महत्त्वपूर्ण है।

5) अपहसित हास्य: ऐसी हँसी में अचानक ही, असमय हास्य फूटता है। हँसते हुए कंधे-सिर आदि के हिलने और हँसते-हँसते आँखों में आँसू आ जाने की क्रियाएँ देखी जाती हैं।

6) अतिहसित हास्य : नेत्रों में तीव्रता से आँसू आ जाना, तथा हँसी की तीव्रता के कारण उद्धृत चिल्लाहट का स्वर निकलता है और हँसते-हँसते व्यक्ति पेट पकड लेता है।

15201

आ. भरतमुनि के द्वारा किया गया यह विभाजन अनुभव तथा निरीक्षण पर आधारित है, मानसिक आधार कम है। शारीरिक अभिनय पर भरतमुनि का विशेष ध्यान था। भरतमुनि के द्वारा किए गए विभाजन को धनंजय, विश्वनाथ आदि आचार्यों ने भी मान्यता दी है।

3) आश्रय के आधार पर हास्य के भेद -

हास्य का प्राचीनतम वर्गीकरण आचार्य भरतमुनि ने किया था। आश्रय के आधार पर उन्होंने हास्य के दो भेद किए हैं -

1. आत्मस्थ : जब कोई व्यक्ति स्वयं अपने आप पर ही हँसता है, तब वह आत्मस्थ हास्य हो जायेगा।
2. परस्थ : जब कोई दूसरे पर हँसे या दूसरे को हँसाएँ तो यह परस्थ हास्य हो जायेगा।

4) अन्य स्थूल आधार -

हास्य-रस का स्वभाव की दृष्टि से विभाजन :

इस दृष्टि से हास्य के चार भेद किए जा सकते हैं -

1. कोमल हास्य, 2. उदासीन हास्य, 3. कठोर हास्य, 4. निर्मम हास्य।

1) कोमल हास्य : ऐसा हास्य स्नेह से भरपूर और करूणा से युक्त होता है। जैसे-माता का अपने बालक को देखकर हँसना।

2) उदासीन हास्य : इसमें सहानुभूति लोप हो जाती है, पर ईर्ष्या भी पूरी तरह प्रकट नहीं हो पाती है।

3) कठोर हास्य : ऐसे हास्य में सहानुभूति की मात्रा कम हो जाती है और ईर्ष्या प्रबल हो उठती है।

4) निर्मम हास्य : जिस प्रकार कोमल हास्य दृश्य हृदय से उत्पन्न होता है। उसी प्रकार निर्मम हास्य मस्तिष्क की उपज है। ऐसा हास्य घृणा-द्वेष सें युक्त होता है। जैसे - किसी पराजित पर विजयी का हँसना निर्मम हास्य का उदाहरण हो सकता है।

इस प्रकार स्वभाव की दृष्टि से हास्य के भेद देखे जा सकते हैं।

5) हास्य उत्पत्ति करनेवाले पात्रों की दृष्टि से हास्य के भेद -

1) ज्ञात हास्य : ज्ञात हास्य उसे कहते हैं जो जानबूझ कर किया जाता है। जो अनायास ही उत्पन्न नहीं होता वह हास्य 'ज्ञात हास्य' कहा जाता है। इसके भी दो प्रकार किए जाते हैं - 1) परिहास 2) उपहास।

परिहास में पात्र स्वयंपर भी हँसते हैं और दूसरों को भी हँसाते हैं। उपहास में दूसरों पर हास्य निर्मिति की जाती है। इसके भी तीन प्रभेद माने गए हैं, - वचन विदग्धता, व्यंग्य और कटाक्ष आदि।

2) अज्ञात हास्य : ऐसा हास्य जिसकी निर्मिति जिस व्यक्ति द्वारा होती है वह स्वयं भी उस विनोद से या अपनी मूर्खता से अनभिज्ञ रहता है। ऐसे व्यक्तियों का आचरण ही हास्य निर्मिति का साधन बनता है। अज्ञात हास्य सुनिश्चित या सोचकर नहीं किया जाता।

6) जाति के आधार पर हास्य के भेद -

1) दिव्य : यह हास्य अत्यानंद हो जाने से उत्पन्न होता है और आनंद का प्रतीक होता है।

2) किन्नरी : यह हास्य किसी की प्रशंसा से युक्त एवं मनोरंजन कराने की क्षमता रखता है।

3) विथाधरी : यह हास्य व्यक्ति में सुधार लाने की दृष्टि रखता है। यह दूसरों में सुधार लाने का कार्य भलि-भाँति करने की कोशिश करता है।

इस प्रकार से हास्य के भेद अनेक आचार्यों ने अपनी-अपनी दृष्टि से बताने की कोशिश की है। केशवदास ने हास्य के चार भेद स्वीकार किए हैं - मंदहास, कलहास, अतिहास और परिहास। डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र ने इस परंपरागत विभाजन के बारे में अपना मत देते हुए उसके लिए पर्यायी भेद बताए हैं - मृदुहास और अट्टहास इन दो भेदों में विभाजन किया है। लेकिन भारतीय विद्वानों द्वारा किए गए ये भेद शारीरिक वर्तन, हाव-भावों पर ही आधारित दिखाई देते हैं। मानसिकता का आधार इसमें नहीं लिया गया है।

7) मानसिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से हास्य के भेद -

पाश्चात्य विद्वानों ने हास्य का विभाजन करते समय शारीरिक आधार या अभिनय की दृष्टि से उसका विभाजन करने के बदले मानसिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से हास्य के भेद किए हैं। पश्चिमी विचारकों द्वारा स्वीकार किए गए हास्य के चार भेद हैं -

" 1) विनोद या शुद्ध हास्य (Humour)
2) व्यंग्य (Satise)
3) व्याजोक्ति (Irony)
4) चमत्कारिक विनोद वचन (Wit)"[1]

हिंदी के आधुनिक विचारक भी पाश्चात्य विद्वानों की इसी दृष्टि से हास्य का चिंतन करने लगे हैं। डॉ. रामकुमार वर्मा ने हास्य का भावविकारों की दृष्टि से विभाजन प्रस्तुत किया है। उन्होंने हास्य के पाँच भेद किए हैं और उनके भी उपभेद बताए हैं -

1) सहज विकार	: (1) विनोद(Wit),	(2) अट्टहास(Caughtee)
2) दृष्टि विकार	: (3) अतिरंजना(Cariatuse),	(4) विद्रूप(Contrast)
3) भाव विकार	: (5) परिहास(Pasody),	(6) उपहास(Comic)
4) ध्वनि विकार	: (7) व्याजोक्ति(Sarcasm),	(8) व्यंग्योक्ति(Tendency Wit)
5) बुद्धि विकार	: (9) व्यंग्य(Satise),	(10) विकृति(Irony)[2]

उपर्युक्त विवेचन से हम कह सकते हैं कि, हास्य के भारतीय आचार्यों द्वारा जो भेद किए गए हैं, वे भेद मानसिकता एवं व्यावहारिकता से युक्त नहीं है। हास्य विभाजन में उन्होंने शारीरिक वर्तन, अभिनय आदि को महत्त्व दिया है। जब कि पाश्चात्य विद्वानों ने हास्य के भेद मानसिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से किए हैं। इस प्रकार से हास्य के अनेक दृष्टियों से बहुत से भेद किए जा सकते हैं।

हास्य एक मानसिक क्रिया है, जो शारीरिक वर्तनोंद्वारा अभिव्यक्त होती है। अत: भारतीय आचार्यों और पाश्चात्य विद्वानों द्वारा किए गए हास्य के भेद अपनी-अपनी जगह ठीक मालूम पड़ते हैं। हास्य में शारीरिक वर्तन, अभिनय आदि का भी उतना ही महत्त्व है,

---

1. डॉ. बालेन्दु तिवारी - हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ - 38
2. वही, पृष्ठ - 37

जितना मानसिक एवं व्यावहारिक दृष्टि का है। हास्य का विचार करते समय उसमें से शारीरिक वर्तन, अभिनय आदि को छोड़ दिया जाए, तो हास्य का प्रकट रूप ओझल हो जायेगा। अत: स्पष्ट है कि हास्य के भेद में भारतीय और पाश्चात्य चिंतकोद्वारा स्पष्ट किए गए भेद परिपूर्ण तो नहीं लेकिन अपनी जगह उचित है।

2.3 व्यंग्य का स्वरूप - विवेचन -

मनुष्य एक बुद्धिजीवी प्राणी है और जीवन के हर एक क्षेत्र में अग्रसर होने का प्रयास करता है। वह विज्ञान का निर्माता है और दिन-ब-दिन विकास की सीढ़ियाँ चढ़ रहा है। फिर भी उसकी अपनी कुछ सीमाएँ होती हैं। ये सीमाएँ उसकी अपनी न्यूनताएँ, कमजोरियाँ, अभाव, मुर्खता आदि ही हैं। इनके कारण ही मनुष्य एक विशिष्ट सीमा तक आकर रुक जाता है। उसकी इन्हीं दोषों, अभावों को एक जागरूक लेखक अपनी पैनी नजर से भाँप लेता है और मनुष्य की विद्रूपताओं पर ध्यान देकर उसे एक ऐसी भाषा में प्रस्तुत करता है कि, वह भाषा व्यंग्य का रूप ले लेती है। व्यंग्य से मनुष्य को चोंट तो जरुर लगती है लेकिन उससे खून नहीं निकलता, व्यंग्य की यह एक विशिष्टता ही है। व्यंग्य का मुख्य उद्देश्य समाज की दुर्बलता को दूर करना एवं समाज की चेतना को जागृत करना ही है। मनुष्यों को हँसाना इसका गौण उद्देश्य है। लेखक की भावाभिव्यक्ति का एक प्रखर माध्यम व्यंग्य है।

समाज में आए दिन रोज नई-नई घटनाएँ घटित होती हैं। कोई घटनाएँ समाज के प्रति अनुकूल है तो कोई प्रतिकूल होती है। आजकल समाज के सभी क्षेत्र में भ्रष्टाचार, शोषण, राजनीति, अन्याय, पक्षपात की वृत्ति बढ़ रही है। समाज के प्रति जागरुक साहित्यकार इस पर व्यंग्य करना शुरु करते हैं। व्यंग्य एक ऐसा शस्त्र है जो बिना आवाज के अपना काम बखूबी निभाता है। व्यंग्य का काम 'साँप भी मर जाए और लाठी भी ना टूटे' जैसा है। समाज में बहुत बार गलत काम करनेवाले लोगों में रईसों, नेताओं आदि प्रतिष्ठित लोगों का ही हाथ होता है। ऐसी स्थिति में दबाव के कारण शासन व्यवस्था भी उन्हें दंडित नहीं कर पाती, तब व्यंग्य अपनी भूमिका निभाता है। व्यंग्य की तीव्रता इतनी होती है कि, सुननेवाला उसे सुनकर तिलमिला जाता है लेकिन इसका उलट कर जवाब देना और भी अपमानित होने जैसा है और वह व्यंग्य से आहत हुआ व्यक्ति चाहकर भी कुछ नहीं बोल पाता।

व्यंग्य वहाँ सफल होता है जहाँ पर पढ़ने के बाद पाठक सोचने पर मजबूर हो जाता है। उन वाक्यों पर कुछ क्षण ही क्यों न हो पाठक विचार अवश्य करता है। व्यंग्य समाज का गंभीरता से निरीक्षण कराता है। व्यंग्य ना केवल समाज में व्याप्त असंगति से पाठक को अवगत कराता है बल्कि उसके प्रति सोचने पर मजबूर भी कर देता है। व्यंग्य सभ्यता का चोला ओढ़कर असभ्यता के पक्ष में रहनेवालों के चेहरे से झूठ का पर्दा गिराता है। समाज में फैली अराजकता के विरुद्ध व्यंग्य ही परिवर्तनीय काम कर रहा है। व्यंग्य में किसी की चापलुसी नहीं की जाती बल्कि व्यंग्य व्यक्ति के दोषों पर तिखा प्रहार करता है। यह चोट बाहरी न होकर आंतरिक होती है। मेरी दृष्टि से व्यंग्य वह है जो व्यक्ति को उसके अवगुणों, दोषों से इस प्रकार से अवगत कराता है कि व्यक्ति उनको पुन: दोहराने की जरुरत न कर सके। व्यक्ति अपने दोषों से अवगत हो कर उस पर विचार करता है और उसमें सुधार लाने की कोशिश करता है। इतनी प्रखरता व्यंग्य में होती है कि वह व्यक्ति की मानसिकता बदल सकता है। सामाजिक सुधार का काम भी व्यंग्य-साहित्य के माध्यम से उत्कृष्ट प्रकार से किया जाता है और वह प्रभावी भी होता है।

अन्य साहित्य की तुलना में व्यंग्य साहित्य में गंभीरता दिखाई देती है। समाज को अपने दायित्व के प्रति सजग करने का कार्य व्यंग्य करता है। व्यंग्य में किसी भी प्रकार की प्रशंसा या सुख को स्थान नहीं दिया जाता बल्कि वह यथार्थवादी और बुराई के प्रति घृणाभाव रखता है। व्यंग्य में केवल कही जानेवाली बात किस गति से पाठक की मानसिकता बदल सकती है? - यह देखा जाता है। यहाँ पर मनोरंजन को गौण स्थान होता है और कहीं जानेवाली बात ऐसी तीव्रता से कहीं जाती है कि सुननेवाला भौचक रह जाता है। व्यक्ति की मानसिकता को स्पर्श करना व्यंग्य की विशेषता है। 'व्यंग्य' विधा है या प्रवृत्ति इस विषय को लेकर विद्वानों में मतभेद दिखाई देते हैं। कुछ लोगों की मान्यता है कि 'व्यंग्य' एक विधा है। इस मान्यता को मान लेना 'क्षितिज' के आभास को सत्य मान लेने जैसा है। दूर से देखने पर आकाश जमीन से मिला हुआ दिखाई देता है लेकिन जैसे-जैसे आगे बढ़ते चले जाए वैसे-वैसे यह क्षितिज और दूर चला जाता है। व्यंग्य को भी उसकी अलग शैली के कारण कभी-कभी एक विधा के रूप में देखा गया है लेकिन व्यंग्य स्वतंत्र रूप से साहित्य में प्रयुक्त नहीं हुआ है।

वह किसी अन्य विधा के सहारे ही खड़ा रह पाया है। अत: कहना अनुचित नहीं होगा कि व्यंग्य विधा न होकर केवल एक प्रवृत्ति है।

2.3.1 व्यंग्य का अर्थबोध :

'हिंदी साहित्य कोश' में व्यंग्य शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार दी है -

''वि + अंग = व्यंग, व्यंग से व्यंग्य की निर्मिति हुई है।''[1]

'नालंदा विशाल शब्द सागर' में व्यंग्य का अर्थ इस प्रकार से दिया गया है - ''(1) शब्द का व्यंजना वृत्ति के द्वारा प्रकट होनेवाला अर्थ, (2) गूढ़ अर्थ, (3) ताना। बोली। चुटकी''[2]

'मानक हिंदी कोश' (पाँचवा खंड) में व्यंग्य का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा गया है - ''(1) शब्द की व्यंजना शक्ति (दे.) द्वारा निकलने वाला अर्थ, (2) किसी को चिढ़ाने, दु:खी करने या नीचा दिखाने के लिए कही जानेवाली ऐसी बात जो स्पष्ट शब्दों में न होने पर भी अथवा विपरीत रूप की होने पर भी उक्त प्रकार का अभिप्राय या आशय प्रकट करती हो।''[3]

व्यूत्पत्तिमूलक अर्थ :

हिंदी साहित्य कोश के अनुसार व्यंग्य शब्द की व्युत्पत्ति वि + अंग से हुई है। 'वि' का अर्थ विकृत या विरूप है। अर्थात् विकृति अथवा विरुपण व्यंग्य के कारक तत्त्व हैं। लगभग यही बात संस्कृत 'शब्द कल्पद्रुम:' में व्यंग्य को समझाते हुए कही गई है - ''विकृतानि अंगानि यस्मात।''[4]

हिंदी साहित्य में 'व्यंग' एवं 'व्यंग्य' के शाब्दिक स्वरूप को लेकर विद्वानों में मतभेद रहा है। इन दोनों शब्दों से एक ही अर्थ अभिप्रेत है, तथापि 'बृहत् हिंदी कोश' में इनकी व्याख्या अलग-अलग अर्थ व्यक्त करती है -

''व्यंग' - इसका अर्थ 'शरीर-हीन, चक्रहीन, विकलांग, खज, लंगडा एवं अव्यवस्थित' दिया गया है।

---

1. सं.धीरेंद्र वर्मा एवं अन्य - हिंदी साहित्य कोश (भाग 1), पृष्ठ - 804
2. सं. श्री. नवल जी - नालंदा विशाल शब्द सागर, पृष्ठ - 1308
3. सं. रामचंद्र वर्मा - मानक हिंदी कोश (पाँचवा खंड), पृष्ठ - 123
4. सं. राजा राधाकांत देव - शब्द कल्पद्रुम:, चतुर्थो भाग, पृष्ठ - 530

'व्यंग्य' - व्यंग्य शब्द का अर्थ 'व्यंजनावृत्ति द्वारा बोधित, संकेतित कहते हुए संकेतार्थ, गुढ़ार्थ, नवलेखन में प्रयुक्त एक शब्द जो यह स्वीकार करता है कि स्थितियों का सही रूप कलात्मक विश्लेषण से नहीं, उन्हें विडंबित कर के स्पष्ट किया जा सकता है; नीचा दिखाने आदि के उद्देश्य से कहे गए विपरीतार्थ - बोधक शब्द, 'ताना' कहा गया है।''[1]

'व्यंग्य' शब्द का उच्चारण :

हिंदी उच्चारण कोश (A Dictionary of Hindi Pronounciation) में डॉ. भोलानाथ तिवारी ने व्यंग्य के उच्चारण के संबंधी लिखा है -

'व्यंग्य - व्यड़.ग्य् wyāṅgy , 'व्यङ्.-ग्य (स) wyāṅ-gya (s),

~कार 'व्यङ्ग्य - कार् wyāṅgy-ka:r'[2]

इस प्रकार से व्यंग्य के विभिन्न कोशों में अर्थ तथा उच्चारण को देखा जा सकता है।

व्यंग्य के लिए पर्यायी शब्द :

हिंदी साहित्य की तरह ही भारत के अन्य भाषाओं में भी व्यंग्य का प्रयोग किया जाता है। मराठी, गुजराती, सिंधी, बंगला, उर्दू तथा दक्षिण भारतीय भाषाओं के साहित्य में भी व्यंग्य को स्थान दिया गया है। अत: विभिन्न भाषाओं में व्यंग्य के लिए प्रयुक्त शब्द निम्नांकित हैं -

1) अँग्रेजी में व्यंग्य के लिए 'सटायर' शब्द प्रयुक्त किया जाता है।
2) मराठी में व्यंग्य को 'उपरोध' नाम से जाना जाता है।
3) गुजराती में व्यंग्य 'कटाक्ष' के रूप में प्रचलित है।
4) सिंधी भाषा में व्यंग्य के लिए 'तंजु' शब्द प्रचलित है।
5) बंगला में 'व्यंग्य' के लिए उपहास, प्रहसन और व्यंग्य आदि शब्द प्रयोग किए जाते हैं।

2.3.2 व्यंग्य की परिभाषा :

विद्वानों ने अपनी-अपनी दृष्टि से व्यंग्य की परिभाषा प्रस्तुत की है। व्यंग्य के स्वरूप, लक्षण, वैशिष्ट, मर्यादा आदि का विचार करते हुए यह परिभाषाएँ लिखी गई हैं। यह परिभाषाएँ निम्न रूप से देखी जा सकती हैं -

---

1. सं. पं. कालिका प्रसाद एवं अन्य - बृहद हिंदी कोश, पृष्ठ - 1915
2. सं. डॉ. भोलानाथ तिवारी - हिंदी उच्चारण कोश, पृष्ठ - 395

2.3.2.1 भारतीय विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषाएँ :-

1) हिंदी के प्रमुख व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई ने कहा है - ''व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार करता है, जीवन की आलोचना करता है, विसंगतियों, मिथ्याचारों और पाखंडों का पर्दाफाश करता है।''[1]

2) डॉ. प्रभाकर माचवे लिखते हैं - ''मेरे लिए व्यंग्य कोई पोज का अंदाज या लटका या बौद्धिक व्यायाम नहीं पर एक आवश्यक अस्त्र है। सफाई करने के लिए किसी को हाथ गंदे करने ही होंगे किसी-न-किसी को तो बुराई अपने सर पर लेनी ही होगी।''[2]

3) कृश्न चंदर व्यंग्य की परिभाषा बताते हुए लिखते हैं - ''व्यंग्य तो वो तेज नश्तर है जिससे लेखक और कवि समाज के नासूर के गंदे फोड़े खोलता है और उसे स्वास्थ्य, शक्ति और प्रगति की ओर बढ़ाने की चेष्टा करता है।''[3]

4) 'आधुनिक हिंदी हास्य-व्यंग्य' की भूमिका में केशवचंद्र वर्मा कहते हैं - ''मानव व्यापार के व्यापक संदर्भ में जहाँ 'कथनी और करनी' का भेद सहज ही व्यंग्य को जन्म देता रहता है।''[4]

5) शंकर पुणतांबेकर कहते हैं -''व्यंग्य युग की विसंगतियों की वैदग्ध्यपूर्ण तीखी अभिव्यक्ति है।''[5]

6) डॉ. बालेंदु शेखर तिवारी लिखते हैं - ''व्यंग्य एक विशिष्ट समाजधर्मी प्रेक्षणाविधी अथवा एक विशिष्ट मानसिक भंगिमा है जिसका उद्भव अन्तर्विरोधों के कारण होता है और जिसमें व्यक्ति अथवा व्यवस्था - विशेष के दौर्बल्य की आक्षेपात्मक अभिव्यक्ति द्वारा परिवर्तन का अभीष्ट पूर्ण होता है।''[6]

---

1. डॉ. बालेंदु तिवारी - हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ - 54 से उद्धृत
2. वही, पृष्ठ - 53
3. डॉ.बापूराव देसाई - हिंदी व्यंग्य विधा : शास्त्र और इतिहास, पृष्ठ - 20
4. वही, पृष्ठ - 20
5. वही, पृष्ठ - 20
6. डॉ. बालेंदु तिवारी - हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ - 56

7) डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी के मतानुसार, ''आलम्बन के प्रति तिरस्कार, उपेक्षा या भर्त्सना की भावना लेकर बढ़नेवाला हास्य 'व्यंग्य' कहलाता है।''[1]

उपर्युक्त परिभाषाएँ पूर्णत्व को नहीं पहुँची हैं, उसमें कहीं-न-कहीं पूर्णत्व का अभाव है।

8) डॉ. बापूराव देसाई ने व्यंग्य को निम्नलिखित शब्दों में निर्दिष्ट करने का प्रयास किया है - ''व्यंग्य समाज की तात्कालिन विसंगतिपूर्ण परिवेश की वह तल्ख अभिव्यक्ति है, जो प्रहार कर व्यक्ति, वस्तु तथा समाज की पोल खोलने का एक अस्त्र है।''[2]

इस प्रकार से हरिशंकर परसाई ने व्यंग्य को जीवन की विसंगतियों, मिथ्याचारों, झूठ का पर्दाफाश करनेवाला माना है। डॉ. प्रभाकर माचवे व्यंग्य को एक अस्त्र मानते हैं, जिसके द्वारा व्यंग्यकार समाज की बुराईयों को साफ करता है। कृश्न चंदर व्यंग्य को एक ऐसा साधन मानते हैं, जो समाज में फैली सड़न को दूर कर समाज में सुधार लाने का प्रयास करता है। केशवचंद्र की मान्यता है कि जहाँ व्यक्ति के कथन के साथ उसका वर्तन मेल नहीं खाता वहाँ पर व्यंग्य का निर्माण होता है। अर्थात् ये भी विसंगति को ही व्यंग्य का कारण मानते हैं। शंकर पुणतांबेकर और हरिशंकर परसाई की मान्यताएँ मिलती-जुलती हैं। पुणतांबेकर ने व्यंग्य द्वारा समाज में व्याप्त विसंगति को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है। डॉ. तिवारी के कथन से स्पष्ट है कि व्यक्ति अथवा व्यवस्था की कमजोरियों के प्रति निंदा करना, उस पर टिका करना और उसके द्वारा परिवर्तन का हेतु साध्य करने का कार्य व्यंग्य करता है।

उपरोक्त सभी परिभाषाओं का अध्ययन करने पर व्यंग्य के बारे में यह कहना ठीक रहेगा कि व्यंग्य तात्कालिन समाज में व्याप्त प्रतिकूल परिस्थितियों के खिलाफ प्रखरता से विरोध करने का एकमात्र साधन है। व्यक्ति तथा समाज की मानसिकता को बदलने का काम व्यंग्य के माध्यम से संभव है।

व्यंग्य के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए पाश्चात्य विद्वानों ने भी विभिन्न परिभाषाएँ स्पष्ट की हैं।

---

1. डॉ.बरसानेलाल चतुर्वेदी - हिंदी साहित्य में हास्य रस, पृष्ठ - 46
2. डॉ. देसाई - हिंदी व्यंग्य विधा : शास्त्र और इतिहास, पृष्ठ - 20

2.3.2.2 पाश्चात्य् विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषाएँ :-

1) जान एम. बुलिट ने व्यंग्य की परिभाषा बताते हुए व्यंग्य को लचीला कहा है। इन्होंने औरों की तरह व्यंग्य की साहित्यिकता को परिभाषित करने के बजाय उसके व्यापक आयाम को स्पष्ट करते हुए कहा है - ''व्यंग्य शब्द के अंतर्गत मानव तथा उसके आचार की समस्त त्रुटियों पर किया गया साहित्यिक प्रहार निहित है, चाहे वह अच्छा हो या बुरा, सामान्य हो अथवा विशिष्ट, सत्य हो अथवा असत्य, क्रूर हो अथवा हास्यास्पद, गद्य हो अथवा पद्य।''[1]

("Whether good or bad, general or particulars, true or false, savage or humerous, prosic or poetic - any literary attach upon the voices of holly of men and manners may be contained under the general word satire." - John M. Bullibt)

2) मेरेडिथ ने अपनी पुस्तक 'The Idea of comedy' में लिखा है - "If you detect the ridicule and your kindness is chilled by it you are slipping into the grasp of satire."

अर्थात् - ''अगर आप हास्यास्पद का इतना मज़ाक उड़ाते हैं कि, उसमें आपकी दयालुता समाप्त हो जाए तो आप का हास्य 'व्यंग्य' की कोटि में आ जायेगा।''[2]

'ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी में व्यंग्य की परिभाषा स्पष्ट करते हुए लिखा है - ''पद्य अथवा आधुनिक प्रयोगों में गद्यात्मक लेख जिसमें प्रचलित अवगुणों अथवा मुर्खताओं को कभी-कभार अनुचित ढंग से ही, हास्यास्पद बना दिया जाता है। इसका लक्ष्य किसी व्यक्ति - विशेष अथवा व्यक्तियों के समूह का उपहास करना होता है और इस प्रकार जो एक व्यक्तिगत आक्षेप लेख जैसा होता है।''[3]

("A poem or in modern use sometimes a prose composition, in which prevailing voices or follies are held upto ridicule, sometimes less correctly applied to composition inverse or prose intended to ridicule a particular person or class of persons, a lampoon.")

---

1. डॉ. शशि मिश्र - स्वातंत्र्योत्तर हिंदी व्यंग्य निबंध, पृष्ठ - 5
2. डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी - हिंदी साहित्य में हास्य रस, पृष्ठ - 46
3. डॉ. शशि मिश्र - स्वातंत्र्योत्तर हिंदी व्यंग्य निबंध, पृष्ठ - 7

इस प्रकार से व्यंग्य के विषय में भारतीय तथा पाश्चात्य विचारकों ने परिभाषा बताने का प्रयास किया है। व्यंग्य-साहित्य के माध्यम से व्यक्ति की मानसिकता बदलने का जोरदार प्रयास किया जाता है और इसके लिए समय आने पर व्यंग्यकार अनेक कठोर, द्वेषपूर्ण, घृणास्पद, जहरीले शब्दों का, वाक्यों का प्रयोग करता है। प्रसंगवश अश्लील शब्दों आदि का भी प्रयोग किया जाता है। लेकिन यह व्यंग्य के लिए इतना ही आवश्यक है जितना कि नाटक के लिए संवाद, उपन्यास तथा कहानी के लिए कथा। अत: स्पष्ट है व्यंग्य एक आक्रमक साहित्य है। इसका अर्थ यह नहीं कि व्यंग्य गालियाँ देना तथा किसी से दुश्मनी का बदला लेने का साधन है, अगर ऐसा हुआ तो वह व्यंग्य का निकृष्ट रूप होगा। वह व्यंग्य का असाहित्यिक रूप बन जायेगा। व्यंग्य में गहराई का अभाव, असाहित्यिकता न आए इसलिए उसमें बुद्धि-तत्त्व का सहयोग आवश्यक होता है। बुद्धि-तत्त्व के सहयोग से किया गया व्यंग्य एक उत्कृष्ठ व्यंग्य साहित्य होता है। किसी से बदला लेने के उद्देश्य से या जानबूझकर किसी के खिलाफ लिखने के उद्देश्य से व्यंग्य का सृजन करने के बदले भटके हुए समाज को राह दिखाने का, उसकी असंगतियों को सामने लाने का उद्देश्य ही एक सफल व्यंग्य का लक्षण है।

2.3.3 व्यंग्य के प्रकार :

व्यंग्य का भी विभिन्न प्रकारों में विभाजन किया गया है। वास्तव में व्यंग्य को हास्य का ही एक प्रकार माना गया था। हास्य का एक विभाजन व्यंग्य भी बताया गया है। हास्य के भेदों के रूप में आज तक व्यंग्य की चर्चा होती रही है लेकिन अब हास्य और व्यंग्य को अलग रूप में देखा जाता है। व्यंग्य में हास्य थोड़ी -बहुत मात्रा में होता है लेकिन वह हास्य, अलग प्रकार का होता है। डॉ. शेरजंग गर्ग, डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी आदि विद्वानों ने व्यंग्य के भेदों को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

डॉ. शेरजंग गर्ग ने प्रेरणा के आधार पर व्यंग्य के दो वर्ग किए हैं - वैयक्तिक और निर्वेयक्तिक। इनके भी दो प्रकार देखे जा सकते हैं -

1) वैयक्तिक व्यंग्य - (i) आत्म व्यंग्य
(ii) परस्य व्यंग्य

2) निर्वेयक्तिक व्यंग्य - (i) राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, परिस्थितियों पर अथवा इन स्थितियों की विडंबना को उभारने वाला व्यंग्य.

(ii) दैवी एवं नियती की दारुणता को दर्शानेवाला व्यंग्य[1]

आ. भरतमुनि ने हास्य का विभाजन किया था आत्मस्थ तथा परस्थ। उसी का प्रभाव डॉ.गर्ग के वैयक्तिक और निर्वेयक्तिक विभाजन पर पड़ा हुआ दिखाई देता है।

डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी ने भी व्यंग्य का आश्रय के अनुसार ही वर्गीकरण किया है। वे कहते हैं - ''वास्तव में व्यंग्य दो प्रकार का होता है - (1) व्यक्तिगत व्यंग्य, (2) समष्टिगत व्यंग्य। समष्टिगत व्यंग्य का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है - धर्म संबंधित, समाज संबंधित, साहित्य संबंधित, राजनीति संबंधित, मानवीय दुर्बलताओं से संबंधित।''[2]

लेकिन डॉ. चतुर्वेदी द्वारा किए गए इस विभाजन में व्यंग्य का चरित्र एवं महत्त्व का विचार नहीं किया गया। व्यंग्य के प्रयोग, स्वभाव और प्रभाव का विचार करते हुए पाश्चात्य विचारको ने व्यंग्य का विभाजन किया है। तिवारी जी ने इस विभाजन को मान्य कर उसका स्पष्टीकरण किया है -

2.3.3.1 चमत्कारिक व्यंग्य विनोद (Wit) :-

डॉ. बालेंदु शेखर तिवारी इस भेद को स्पष्ट करते हुए कहते हैं - ''वास्तविकता तो यह है कि व्यंग्य का यह भेद मानसिक सजगता एवं संक्षिप्त अभिव्यक्ति के धरातल पर विद्युत की भाँति चमक कर विलीन हो जाने वाला प्रकाश है।''[3]

इस प्रकार का व्यंग्य उक्ति वैचित्र्य से उत्पन्न होता है। एकाध वाक्य ऐसा वक्र या चमत्कारिक होता है कि व्यक्ति की मानसिकता पर छा जाता है। डॉ. रमाशंकर श्रीवास्तव के अनुसार - ''चमत्कारिक विनोद वचन का तात्पर्य वाणी के चमत्कार से है तथा दो असम्बद्ध वस्तुओं में चमत्कारिक ढंग से सम्बद्धता का दर्शन कराकर विनोद उत्पन्न करना इसका कार्य है।''[4]

---

1. डॉ. शेरजंग गर्ग - स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कविता में व्यंग्य, पृष्ठ - 69
2. डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी - आधुनिक हिंदी काव्य में व्यंग्य, पृष्ठ - 24
3. डॉ. बालेंदु तिवारी - हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ - 71
4. वही, पृष्ठ - 71

2.3.3.2 व्याजोक्ति (Irony) :-

इसमें वास्तविक अर्थ को छिपाकर वक्रोक्ति के सहारे विनोद निर्मिति कर प्रहार किया जाता है। यह व्यंग्य का एक प्रकार है, जिसमें प्रशंसा के माध्यम से ही व्यक्ति की निंदा की जाती है।

2.3.3.3 उपहास (Sarcasm) :-

यह व्यंग्य का प्रत्यक्ष माध्यम है। व्यक्ति के सामने ही उसका मजाक उड़ाकर उसे तुच्छ साबित कर उसका उपहास किया जाता है। Sarcasm के लिए हिंदी में ताना, वैयक्तिक व्यंग्य, वक्रोक्ति आदि पर्याय है लेकिन 'उपहास' शब्द से Sarcasm का अर्थ, उसकी कटुता अधिक प्रभावी ढंग से व्यक्त होती है।

2.3.3.4 व्याकृति (Buslesque) :-

इस Buslesque अँग्रेजी शब्द के पर्याय के लिए बरसानेलाल जी ने हिंदी में 'विद्रूपिका' शब्द का प्रयोग किया है। व्यंग्य के इस भेद के अंतर्गत व्यक्ति-व्यक्ति या अन्य वस्तुओं के अनुकरण और अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन, व्यवहार द्वारा हास्योत्पत्ति कर व्यंग्य किया जाता है।

व्याकृति के भी पैरोडी, केरिकेचर, ट्रावेस्टी, मॉकपोश्म आदि प्रभेद पाश्चात्य साहित्यशास्त्र में स्वीकृत किए गए हैं।

2.3.3.5 आक्षेप (Compoon) :-

तिवारी जी ने इसके बारे में लिखा है - "आपेक्ष सीधा और तुरंत चोट पहुँचानेवाला हथियार है, जिसमें व्यंग्य किसी विशेष कौशल की अपेक्षा नहीं करता।"[1]

यह एक-दूसरे को चोट पहुँचाने के उद्देश्य से प्रयुक्त किया जाता है। व्यक्तिगत द्वेष, वैमनस्य इसको प्रोत्साहन देते हैं।

इस प्रकार से डॉ. बालेंदु शेखर तिवारी ने पाश्चात्य चिंतकों द्वारा स्वीकृत किए गए पाँच भेदों को मान्य किया है। उपर्युक्त भेदों का वर्गीकरण आलंबन के आधार पर न

---

1. डॉ. बालेंदु तिवारी - हिंदी का स्वातंत्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य, पृष्ठ - 73

होकर व्यंग्य की चारित्रिक भंगिमा को आधार बनाकर किया गया है। व्यंग्य के चरित्र को स्पष्ट करने में चमत्कारिक विनोद वचन, व्याजोक्ति, उपहास, व्याकृति, आक्षेप यह पाँच प्रकार अपनी सफल भूमिका निभाते हैं।

व्यंग्य के तत्त्व :

डॉ. हरिशंकर दुबे द्वारा व्यंग्य के तत्त्व भी बताए गए हैं - (1) विसंगतियों का कथ्य, (2) चरित्रांकन का वैशिष्ट्य, (3) सत्यान्वेषण परक दृष्टि, (4) भिन्नताओं का मिश्रित स्वभाव, (5) भाषागत - वैशिष्ट्य, (6) 'फन्तासी' के प्रयोग, (7) बुद्धि - पक्ष का प्राधान्य, (8) तटस्थ - विश्लेषणात्मकता, (9) संवदेना की पृष्ठभूमि, (10) संक्षिप्तता एवं संहिति। इस प्रकार से दुबे जी ने व्यंग्य के तत्त्व बताए हैं।

व्यंग्य के अर्थ, प्रकार, परिभाषा आदि को जान लेने के बाद हास्य और व्यंग्य के परस्पर संबंध पर विचार करेंगे।

2.4 हास्य - व्यंग्य का संबंध एवं पार्थक्य -

हास्य के प्रभेद-विशेष के रूप में व्यंग्य की चर्चा अब तक हास्य और व्यंग्य दोनों को एक-दूसरे के साथ रखा जाता था। हास्य और व्यंग्य को एक ही समझने की परंपरा अब बदल रही है। हास्य और व्यंग्य के स्वतंत्र अस्तित्व को अब विचारकों ने स्वीकार करना सीख लिया है।

हास्य - व्यंग्य का विचार करें तो उसके शुरुआत से दोनों को एक ही समझा गया। तात्कालिक विचारकों ने हास्य और व्यंग्य को एक-दूसरे पर निर्भर माना है लेकिन यह अनुचित है। हास्य और व्यंग्य एक-दूसरे पर निर्भर नहीं है परंतु उन्हें एक-दूसरे के सहायक कह सकते हैं, उनके मिश्रण से केवल एक के प्रयोग से उत्पन्न होनेवाली प्रतिकूल स्थिति को सँभाला जा सकता है। जैसे कि केवल प्रखर व्यंग्य के प्रयोग से व्यक्ति आहत हो कर उल्टा विरोध कर सकता है, लेकिन यहीं व्यंग्य हास्य मिश्रित हो तो संबंधित व्यक्ति चाहकर भी चूप बैठ जाता है। कहने का तात्पर्य यहीं है कि व्यंग्य और हास्य दो अलग-अलग संकल्पनाएँ हैं, जिनके मिश्रण से 'हास्य-व्यंग्य' का निर्माण होता है।

2.4.1 हास्य और व्यंग्य दो अलग प्रवृत्तियाँ :

हास्य और व्यंग्य की पृथकता का विचार करते समय सब से पहले हास्य और व्यंग्य की जाति पर विचार करना जरुरी है। इन दोनों को एक ही नहीं कहा जा सकता। 'हास्य' एक प्रवृत्ति तो है ही, साथ ही रस का एक प्रकार भी है तो व्यंग्य एक प्रवृत्ति है। समाज की विसंगतियों के विरूद्ध असंतोष व्यक्त करने का उत्तम साधन 'व्यंग्य' है।

2.4.2 हास्य और व्यंग्य के उद्देश्य में भिन्नता :

हास्य और व्यंग्य में उद्देश्य की दृष्टि से भी भिन्नता दिखाई देती है। हास्य एक रस है जिसका उद्देश्य है मनोरंजन करना। हास्य का लक्ष्य ही है - हँसाना। समाज-प्रबोधन आदि को वह गौण स्थान देता है। तो समाज को उसकी विसंगतियों से ज्ञात कराना, समाज को सही रास्ते पर लाना व्यंग्य का लक्ष्य है, इसमें मनोरंजन को गौण स्थान है। इस तरह हास्य के और व्यंग्य के उद्देश्य में भिन्नता दिखाई देती है।

2.4.3 परिणाम की दृष्टि से भिन्नता :

हास्य का सहृदय के मन पर प्रभाव पड़ता है तब वह उल्हासित होकर हँसने लगता है। हास्य से व्यक्ति का मन प्रसन्न हो जाता है। व्यंग्य का परिणाम व्यक्ति के मन-मस्तिष्क पर गहरा असर छोड़ जाता है। व्यंग्य समाज की विसंगतियाँ, कमियों को समाज के सामने ऐसी वास्तविक स्थिति में खड़ा कर देता है कि, समाज उससे मूँह फेर ही नहीं पाता, वह उस पर विचार करने के लिए विवश हो जाता है।

इस प्रकार से हम हास्य और व्यंग्य की पृथकता को देख सकते हैं। लेकिन हरिशंकर परसाई, काका हाथरसी, श्रीलाल शुक्ल आदि विचारक केवल हास्य या व्यंग्य का प्रयोग करने के बदले हास्य-व्यंग्य दोनों का प्रयोग करने के पक्ष में हैं। काका हाथरसी इसके बारे में कहते हैं कि, "व्यंग्य में यदि हास्य नहीं होगा तो वह कोतवाल का हंटर हो जायेगा। इससे हमें फायदा भी होता है क्योंकि हास्य मिश्रित व्यंग्य सीधा प्रहार करता है और उससे चोट नहीं लगती।"[1] इस प्रकार हास्य-व्यंग्य मिश्रित साहित्य अपना काम बखूबी करता है। डॉ. शेरजंग गर्ग ने इस प्रकार हास्य मिश्रित व्यंग्य को हास्य-व्यंग्य की संज्ञा दी है। वे कहते हैं - "हँसते-हँसते विसंगतियों को व्यक्त करनेवाला व्यंग्य नहीं हास्य-व्यंग्य के नाम से पुकारा जाना समीचीन होता है।"[2]

---

1. डॉ. श्यामसुंदर घोष - व्यंग्य विवेचन, पृष्ठ - 89
2. डॉ. हरिशंकर दुबे - स्वातंत्र्योत्तर हिंदी गद्य में व्यंग्य, पृष्ठ - 19

डॉ. शेरजंग गर्ग ने प्रस्तुत की हुई संज्ञा को अधिक स्पष्ट करते हुए डॉ. रेड्डी ने अपना विचार प्रस्तुत किया है कि, ''ऐसी रचनाओं में यह देखना आवश्यक होता है कि इनमें हास्य की मात्रा अधिक होती है या व्यंग्य की। इस आधार पर इनको 'हास्य-मिश्रित व्यंग्य रचना' या 'व्यंग्य मिश्रित हास्य रचना' कहा जा सकता है।''[1]

इस तरह से हम हास्य-व्यंग्य के परस्पर संबंध को देखने पर कह सकते हैं - हास्य और व्यंग्य दो अलग- अलग संकल्पनाएँ हैं। वह दोनों एक-दूसरे पर आधारित न होकर एक-दूसरे के सहायक हैं।

2.5 एकांकी का उद्‌भव एवं विकास -

2.5.1 'एकांकी' शब्द का अर्थ :

'एकांकी' का अर्थ 'नालंदा विशाल शब्द सागर' में इस प्रकार बताया गया है- (1) रूप के दस-दस भेदों में से एक। इसमें प्रसिद्‌ध नायक का चरित्र होता है, जिसका कथानक रसमय हो। इसकी भाषा सरल तथा वाक्य छोटे-छोटे और सारयुक्त होने चाहिए। (2) एक ही अंक में समाप्त होनेवाला नाटक।''[2]

'मानक हिंदी कोश' में रामचंद्र वर्मा ने एकांकी का अर्थ इस प्रकार दिया है - ''एकांकी - वि.(सं.एकांक) (दृश्यकाव्य या नाटक) जो एक हीं अंक में पूरा हो। जिसमें एक ही अंक हो। पु. 1. दस प्रकार के रूपकों में से एक। 2. आजकल वह छोटा नाटक जिसमें कई दृश्यों का एक ही अंक हो। (वन-एक्ट-प्ले)''[3]

2.5.2 उद्‌भव एवं विकास :

यहाँ पर केवल एकांकी के उद्‌भव एवं विकास पर प्रकाश मात्र डाला गया है। एकांकी नाटक का ही लघु रूप है। पहले नाट्‌यगृहों में तीन-चार घंटों तक एक नाटक खेला जाता था। नाटक के शुरू होने से पूर्व बीचवाले समय में दर्शकों के मनोरंजन के लिए छोटे-छोटे नाटक खेले जाते थे। यह नाटक छोटे होने के बावजूद भी इतने उद्‌देश्यपूर्ण तथा मनोरंजक थे कि दर्शक यही नाटक देखकर संतुष्ट होने लगे और मुख्य नाटक बिना देखे ही लौट जाने लगे।

---

1. डॉ. ए.एन. चंद्रशेखर रेड्डी - हिंदी व्यंग्य साहित्य, पृष्ठ - 45
2. सं.श्री. नवल जी - नालन्दा विशाल शब्द सागर, पृष्ठ - 176
3. सं. रामचंद्र वर्मा - मानक हिंदी कोश (पहला खंड), पृष्ठ - 399

परिणामत: मुख्य नाटक शुरू होने के समय तक दर्शकों की संख्या बहुत कम होने लगी। अत: मुख्य नाटक के दर्शकों की संख्या बनाए रखने के लिए इन छोटे नाटकों को दिखाना बंद कर दिया। यह छोटे नाटक स्वतंत्र रूप से खेले जाने लगे और यहीं आगे 'एकांकी' नाम से पुकारे जाने लगे। एकांकी भागदौड़ के जमाने में कम समय में अधिक मनोरंजन करनेवाला होने के कारण इसका विकास होता गया।

भारतेंदु युग से हिंदी में आधुनिक युग की शुरुआत हुई और गदय की भाषा को साहित्य में प्रमुख स्थान मिला। गद्य की विभिन्न विधाओं जैसे कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी आदि का भी जन्म हुआ। भारतेंदु ने एकांकी को नाटक से अलग नहीं माना है। इस काल के लेखकों ने लिखे नाटक एकांकी का अर्थ जानकर उस दृष्टि से लेखन नहीं किया है लेकिन फिर भी उनके लेखन में एकांकी का स्वरूप स्पष्ट हो गया है। इस दृष्टि से नाटक की तरह हिंदी एकांकी के जनक भी भारतेंदु ही है। उनके द्वारा लिखा गया 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' हिंदी का पहला एकांकी है।

एकांकी अपने लघु आकार तथा कम समय में भरपूर मनोरंजक साधन होने के कारण दिन-ब-दिन विकसित होता गया। डॉ. रमेश तिवारी ने लिखा है - ''वस्तुत: साहित्य में आधुनिकता तथा सामाजिकता को प्रकट करने के लिए नाटक या एकांकी से उपयुक्त कोई विधा नहीं होती - यहाँ तक की उपन्यास और कहानी भी नहीं।''[1]

उपेंद्रनाथ अश्क के 'जोंक', 'समझौता'; उदयशंकर भट्ट के 'दो अतिथि', 'वर निर्वाचन' जैसे प्रहसन एकांकी लिखे गए हैं। साथ ही उदयशंकर भट्ट का 'नेता'; सेठ गोविंददास के 'विटेमन', 'अधिकार लिप्सा'; भुवनेश्वर का 'स्ट्राइक' और हरिशंकर शर्मा का 'चिड़िया घर के संवाद' जैसे हास्य-व्यंग्य एकांकी भी लिखे गए हैं।

हिंदी के व्यंग्यकार शंकर पुणतांबेकर के एकांकियों के हास्य-व्यंग्य के स्वरूप को यहाँ स्पष्ट किया गया है।

---

1. डॉ. रमेश तिवारी - हिंदी एकांकी स्वरूप एवं विश्लेषण, पृष्ठ - 35

2.6 विवेच्य एकांकियों के हास्य-व्यंग्य का स्वरूप -

शंकर पुणतांबेकर द्वारा लिखा गया 'बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ' एकांकी संग्रह एक हास्य-व्यंग्य एकांकी संग्रह के रूप में जाना जाता है। प्रस्तुत एकांकियों में हास्य-व्यंग्य के स्वरूप का अध्ययन करते समय एकांकियों में प्रयुक्त हास्य और व्यंग्य का स्वरूपगत विचार किया है। इन एकांकियों के अध्ययन के लिए इन्हें विषय के आधार पर विभाजित किया गया है।

1) सामाजिक हास्य-व्यंग्य एकांकी
2) राजनीतिक हास्य-व्यंग्य एकांकी
3) कौटुंबिक हास्य-व्यंग्य एकांकी

डॉ. पुणतांबेकर ने इस संग्रह में कुल चौदह एकांकियों को संकलित किया है, जो विभिन्न विषयों को लेकर लिखे गए हैं। यह विषय सामाजिक, राजनीतिक, कौटुंबिक आदि स्थितियों पर प्रकाश डालते हैं। सामाजिक हास्य-व्यंग्य एकांकी समाज की विकृति तथा समाज में फैले अनीति को उजागर करते हैं। राजनीतिक हास्य-व्यंग्य एकांकी भी राजनीति को खेल समझनेवालें नेताओं की पोल खोलते हैं। कौटुंबिक हास्य-व्यंग्य एकांकी हास्ययुक्त अधिक बन गए हैं। घरेलु नोंक-झोंक तथा छोटे-मोटे प्रसंगों को केंद्र बनाकर यह एकांकी लिखे गए हैं।

2.6.1 सामाजिक हास्य - व्यंग्य एकांकी :

सामाजिक विषयों को लेकर लिखे गए एकांकियों में 'बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ', 'अनोखेलाल को ऑफिस का चार्ज', 'रंग में भंग', 'इन्टरव्यू की तैयारी', 'अनोखेलाल का सेवाव्रत' आदि एकांकी आ जाते हैं।

2.6.1.1 'बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ' :-

इस एकांकी में डॉक्टरी पेशे की पूँजीवादी वृत्ति को केंद्र बनाया गया है। डॉक्टरी पेशे में फैल रही बढ़ती लूट मार को उजागर करने में यह एकांकी सफल रहा है। यह एक सामाजिक व्यंग्य प्रधान एकांकी है। किशोर नामक पात्र द्वारा जगह-जगह पर हास्य-निर्मिति की गई है।

इस एकांकी में किशोर ही वह जरिया है, जिसके माध्यम से व्यंग्यकार ने इन डॉक्टरों की प्रवृत्ति का विरोध किया है और उनकी पैसों को जमा करने की वृत्ति को हमारे सामने रखा है। किशोर के संवादों से पाठकों को हँसाते-हँसाते डॉक्टरी पेशे की इस वृत्ति पर व्यंग्य भी कसने का काम व्यंग्यकार ने किया है। एकांकी के शीर्षक 'बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ' से ही डॉक्टरों के प्रति असंतोष तथा एक भय का स्वर सामने आ जाता है। वैसे देखा जाए तो किसी को भी डॉक्टर के पास जाना अच्छा नहीं लगता। उसकी बढ़ती दवाईयों की लिस्ट देखकर और अलग-अलग टेस्ट करवा कर मरीज हैरान हो जाते हैं। डॉक्टरों की इस आदत पर किशोर और कैलाश के संवादों से हास्य-व्यंग्य की निर्मिति स्पष्ट दिखाई देती है -

''कैलाश : आज तुम्हारा स्टूल और यूरिन भी दिखाने पहुँच गया है।

किशोर : क्यों ? मेरा स्टूल और यूरिन क्यों मंगवा लिया है ?

क्या स्टूल और यूरिन की आजकल बहुत डिमांड है ?''[1]

साथ ही डॉक्टर मरीज को किस प्रकार से बीमारी का डर दिखाकर उसे और बीमार बना देते हैं इसका संकेत शंकर पुणतांबेकर किशोर के द्वारा देते हैं -

''कैलाश : डरो नहीं। तुम्हारी टी.बी. बढ़ नहीं सकती। मैं टी.बी. स्पेशालिस्ट ही हूँ।

किशोर : टी.बी. स्पेशालिस्ट हो। तब तो मुझे जरूर डरना चाहिए।

कैलाश : क्यों ?

किशोर : मुझमें टी.बी. पैदा करके जो रख दोगे।''[2]

साथ ही डाक्टरों की बेपर्वाही को भी हास्यात्मक रूप से व्यंग्यबद्ध किया है।

''कैलाश : मैं और स्पेशलिस्टों जैसा नहीं हूँ किशोर।

किशोर : हाँ जरुर नहीं होगे। वे टी.बी. का इलाज करते हैं और पेशन्ट टी.बी. से ही मरता है। तुम्हारे टी.बी. के इलाज में वह कैन्सर से मरता होगा।''[3]

इस प्रकार पुणतांबेकर ने डॉक्टरों को शोषक तथा मरिजों को शोषितों के रूप में चित्रित किया है। वास्तव में इस एकांकी मे किशोर और कैलाश दोनों दोस्त है, तो उनके संवादों में मजाकिया भाव ज्यादा दिखाई देता है लेकिन इस मजाक-मजाक में ही समाज में इन डॉक्टरों की सच्ची प्रतिमा को हमारे सामने रखने का प्रयास किया गया है। यह बात भी सोचने

---

1. डॉ. शंकर पुणतांबेकर - बचाओ, मुझे डॉक्टरों से बचाओ, पृष्ठ - 19
2. वही, पृष्ठ - 19
3. वही, पृष्ठ - 20

योग्य है कि क्या सभी डॉक्टर ऐसे ही होते हैं कि जो केवल मरिजों को लूटते हैं या उनकी सही जाँच करने के बदले उनका इलाज शुरू कर देते हैं। असल बात यह है कि समाज में ऐसे भी डॉक्टर हैं जो अपने कर्तव्य को समझते हैं, जिम्मेदारी को निभाते हैं लेकिन ऐसे डॉक्टरों की संख्या ऊँगलियों पर गिनने जितनी है। अत: डॉक्टरों की बढ़ती पूँजीवादी दृष्टि को पुणतांबेकर ने हास्य-व्यंग्य के माध्यम से स्पष्ट किया है।

2.6.1.2 अनोखेलाल को ऑफिस का चार्ज :-

यह एकांकी समाज के बहुत बड़े हिस्से वाली लोकसंख्या अर्थात् मध्यवर्गीय समाज का चित्रण करता है। मध्यवर्गीय समाज के लोग हमेशा उच्चवर्गीयों का अनुकरण करने में लगे रहते हैं। हमेशा उच्चवर्गीयों को प्राप्त भौतिक सुखों का अनुभव लेने की इच्छा रखते हैं। मध्यवर्गीयों की इसी वृत्ति को अनोखेलाल पात्र के माध्यम से व्यंग्यकार ने हमारे सामने स्पष्ट किया है।

अनोखेलाल के ऑफिस के हेडक्लर्क एक हफ्ते के लिए छुट्टी पर चले जाते हैं। तब सीनियर होने के नाते ऑफिस का चार्ज अनोखेलाल के हाथ में आ जाता है। अचानक आ गई इस जिम्मेदारी के कारण अनोखेलाल की मानसिकता में परिवर्तन आ जाता है। वह अपने आप को सचमुच का साहब समझने लगता है और भूल जाता है कि यह चार दिन की चांदनी है। अनोखेलाल उच्चवर्गीय लोगों को मिलने वाली सारी सुविधाओं का उपभोग लेना चाहता है और हेडक्लर्क के नौकर लछमन को अपने यहाँ बुला लेता है। वह घरेलु काम में पत्नी की सहायता करना भी अपनी शान के खिलाफ समझता है -

"अनोखे : तरकारी लाने मैं जाँऊ। कमाल करती हो लक्ष्मी। एक अफसर क्या झोला लेकर मंडी में तरकारी खरीदने जाएगा। अरे, लछमन से क्यों नहीं कह देती।"[1]

अनोखेलाल के मित्र अपने दोस्त के हाथ में ऑफिस का चार्ज आने से खुश हो जाते हैं और उस से ऑफिस से छुट्टी माँगने चले जाते हैं लेकिन अनोखेलाल उन पर अफसरी रौब जमाकर उन्हें भगा देता है। उनकी मजबुरियों को वह सुनता नहीं लेकिन जब मिस शर्मा केवल अपनी माँ को स्टेशन से लाने के लिए छुट्टी माँगने आती है तब अनोखे उसे बिना

---

1. डॉ. शंकर पुणतांबेकर - बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ, अनोखेलाल को ऑफिस का चार्ज, पृष्ठ - 49

झिझक छुट्टी दे देता है। उसके इस रवैये पर उसकी पत्नी लक्ष्मी उसे फटकारती है -

"लक्ष्मी : उसे तुमने छुट्टी दे दी होगी। पर पहले जो कौन आए थे उन्हें नहीं दी।

अनोखे : यह सब मेरे अधिकार की बातें हैं। इसमें तुम्हें दस्तंदाजी करने की कोई आवश्यकता नहीं।

लक्ष्मी : उस बेचारे का बेटा बीमार था फिर भी तुमने उसकी अर्जी पर विचार नहीं किया। और यह मिस शर्मा मुस्कराकर पास आकर बैठ गई तो बस कर दी उसकी अर्जी मंजूर।"[1]

इस प्रकार से व्यंग्यकार ने अफसरों की पक्षपाती नीति को अपने व्यंग्य का निशाना बनाया है। बाद में जब प्रसंगवश हेडक्लर्क के समय से पहले लौट आने के कारण अनोखे के अफसरी के सारे ख्वाँब टूट जाते हैं तब जिन-जिन पर उसने अपना रौब दिखाया था वे आकर उस पर ताने कसते हैं -

"सुरेशचंद्र : अढ़ाई घंटे की अफसरी अफसर बनने से पहले ही खत्म हो गई। हा हा हा।"[2]

शंकर पुणतांबेकर ने यहाँ पर मध्यवर्गीय समाज की बढ़ती इच्छा, अपेक्षाओं पर तथा अफसरों की पक्षपाती वृत्ति पर शिष्ट हास्य के साथ व्यंग्य किया है।

2.6.1.3 रंग में भंग :-

यह एकांकी कॉलेज के छात्रों की मनोवृत्ति को प्रकाशित करती है। आज कल के छात्रों में अपने शिक्षकों के प्रति किस प्रकार से आदर की भावना नष्ट होती जा रही हैं, इसका सफल चित्रण इसमें किया गया है। इसमें छात्र कॉलेज के नाटक की रिहर्सल कर रहे हैं और इनके संवाद छात्र की मनोवृत्ति को सामने रखते हैं। हास्यात्मक व्यंग्य छात्रों की वृत्ति को स्पष्ट करता है।

2.6.1.4 इन्टरव्यू की तैयारी :-

यह एक हास्य प्रधान व्यंग्य एकांकी है। इस एकांकी में एक अध्यक्ष इन्टरव्यू लेने की तैयारी कर रहे हैं। यह अध्यक्ष स्वयं अनपढ़ होकर भी कॉलेज कमेटी का अध्यक्ष हैं

---

1. डॉ. शंकर पुणतांबेकर - बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ, अनोखेलाल को ऑफिस का चार्ज, पृष्ठ - 55
2. वही, पृष्ठ - 57

और कॉलेज में उम्मीदवारों के इन्टरव्यू लेने के लिए जा रहा है। इस एकांकी में विहसित हास्य का स्वरूप दिखाई देता है। इन्टरव्यू की तैयारी करते समय इस सेठ और सेठानी के संवाद हास्यास्पद बने हुए हैं -

"सेठजी : अच्छा यह बताओ, तुमने किस डिगरी से युनिवर्सिटी पाई है ?

सेठानी : यह तो मुझे नहीं मालूम।

सेठजी : तुम एम.ए. हो। लेकिन यह तो बतलाओ तुमने बी.ए. पास किया है या नहीं ?

सेठानी : नहीं। मैं सिर्फ एम.ए. तक पढ़ी हूँ। बी.ए. नहीं किया।

सेठजी : बिहारी के बारे में जानकारी दो।

सेठानी : यह हमारे पड़ोसी के यहाँ का नौकर है।"[1]

इस प्रकार से अध्यक्ष बने सेठजी के अज्ञान के दर्शन होते हैं। यहाँ पर सेठजी के हर सवाल और सेठानी के गोलमोल जवाब उनके अधूरे ज्ञान के साक्षी है, जो हास्य की निर्मिति का कारण बने हैं ।

2.6.1.5 अनोखेलाल का सेवाव्रत :-

प्रस्तुत एकांकी में एक सच्चे समाजसेवी का समाज द्वारा किस प्रकार दुरुपयोग किया जाता है इसका बड़ा मार्मिक उदाहरण पेश किया गया है। प्रस्तुत एकांकी में अनोखेलाल हमारे सामने एक समाजसेवी के रूप में आता है। अनोखेलाल ने सेवा का व्रत ले लिया है और वह उसके सामने आनेवाला हर कार्य जो समाज के हित में हो वह करता ही चला जाता है। इस चक्कर में उसके अपने काम अधूरे रह जाते हैं। लोग यह जानने पर की अनोखेलाल ने समाज सेवा का व्रत लिया है तब वह अपने हर काम अनोखे से करवाते हैं। यहाँ तक की उसे सेवाव्रत की याद दिलाकर उससे हर काम मजबूरन करवा लेते हैं।

रास्ते पर पड़े केले के छिलके उठाना, किसी को बोझ उठाने में मदद करना, किसी बीमार को अस्पताल पहुँचाना आदि सभी काम अनोखेलाल करता है। जब अनोखे बस से सफर करता है तब भी लोग उससे फायदा उठाते हैं -

---

1. डॉ. शंकर पुणतांबेकर - बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ - इन्टरव्यू की तैयारी, पृष्ठ - 102

''एक व्यक्ति : अरे भाई अनोखेलाल, वह औरत खड़ी है उसे बैठने को सीट कर दो।

दूसरा व्यक्ति : क्या बात है यह आदमी ऐसा क्यों कह रहा है ? उस औरत को खुद न सीट देकर उससे क्यों कह रहा है।

तीसरा व्यक्ति : बात यह है जिससे सीट देने के लिए कहा गया है वह आदमी समाजसेवी है। कहनेवाला आदमी यह बात जानता है। इसीलिए उसने आपनी सीट न देकर उससे देने के लिए कहा।''[1]

इस प्रकार समाज से मिल रही सुविधा का नाजायज फायदा उठाने की आदत को हास्य-व्यंग्य के माध्यम से पाठकों के सामने रखा है। यहाँ तक कि दिनभर की समाजसेवा से थका-माँदा अनोखे जब घर आता है तो पड़ोसवाले भी उसे चैन की साँस नहीं लेने देते। पड़ोस की औरत ब्रिज खेलते हुए अपने पति को न उठाकर अनोखे से कपड़े लांड्री मे डालने की अपेक्षा रखती है। इस प्रसंग के संवाद कुछ हास्यात्मक हैं। अनोखे की पत्नी लक्ष्मी जो अनोखे के इस समाजसेवा से तंग आ चुकी है वह उस औरत को टालने की कोशिश करती है। लेकिन अनोखे अपनी फिक्र छोड़ कर उसका काम करने को तैयार हो जाता है और कपड़े का गठ्ठर लेकर ही चक्कर खाके गिर पड़ता है। उसकी इस हालत को भी पड़ोसन मालती झूठ समझकर कपड़े उठाकर चली जाती है।

इस तरह से हास्य-व्यंग्य के माध्यम से समाज की फायदा उठानेवाली आदत पर प्रकाश डाला गया है। इन सामाजिक हास्य-व्यंग्य एकांकियों में हास्य का विचार करें तो वह शिष्ट हास्य ही है जो हास्य के स्मित हास्य प्रकार में आ जाता है। इन एकांकियों में शंकर पुणतांबेकर जी ने शिष्ट हास्य का उपयोग करते हुए समाज का फायदा उठानेवाले डॉक्टरी पेशे पर तथा सच्चे समाजसेवी का फायदा उठानेवाले समाज पर व्यंग्य किया है।

2.6.2 राजनीतिक हास्य-व्यंग्य एकांकी :

राजनीतिक हास्य-व्यंग्य एकांकियों में 'इन्टरव्यू : एक चुनाव के उम्मीदवार से', 'चूहें' आदि एकांकियों को देख सकते हैं। चुनाव को खेल बनाकर उससे खेलनेवाले नेताओं की अक्ल और शकल का भेद सामने लाया गया है। ये नेता ऊपर से एक तो अंदर से एक दिखाई देते हैं।

---

1. डॉ. शंकर पुणतांबेकर - बचाओ मुझे डाक्टरों से बचाओ - अनोखेलाल का सेवाव्रत, पृष्ठ - 148

2.6.2.1 इन्टरव्यू : एक चुनाव के उम्मीदवार से :-

प्रस्तुत एकांकी चुनाव के लिए खड़े रहे उम्मीदवार के अज्ञान पर प्रकाश डालती है। एक डॉक्टर जो जनता के प्रति अपना दायित्व समझकर उस उम्मीदवार का इन्टरव्यू लेता है। इस इन्टरव्यू में उम्मीदवार द्वारा दिए गए जवाब हास्य-व्यंग्य का उत्कृष्ट उदाहरण बन गए हैं। जैसे डॉक्टर के यह पूछने पर की उसकी स्कूली शिक्षा कहाँ तक हुई है ? तब वह उत्तर देता है -

"उम्मीदवार : स्कूली शिक्षा से क्या होता है डॉक्टर साहब। राजनीतिक क्षेत्र में इतना काम किया है और उससे इतना सीखा और अनुभव प्राप्त किया है कि उसके मुकाबले स्कूल कालेज की शिक्षा कुछ भी नहीं है।"[1]

साथ ही प्रस्तुत एकांकी में और एक उदाहरण द्रष्टव्य है -

"डॉक्टर : आपके चुनाव क्षेत्र में अस्पताल कितने हैं ?

उम्मीदवार : मैंने आपसे पहले ही कहा है कि इस प्रकार की व्यर्थ की जानकारी इकट्ठा करने का काम हम लोग नहीं किया करते। हाँ, इतना मैं कह सकता हूँ कि हर गांव में एक-एक स्कूल के साथ-साथ अस्पताल भी अवश्य खुलवा दूँगा।

डॉक्टर : आश्चर्य है, आप भारत के इतने सीमित साधन देखते हुए भी इस प्रकार का आश्वासन दे रहे हैं। हाँ, स्कूल और अस्पताल खुल जायेंगे फिर उनमें अध्यापक और डॉक्टर भले ही न हों।"[2]

इस प्रकार से डॉक्टर के व्यंग्यात्मक प्रश्न और उम्मीदवार के हास्योत्पत्ति करानेवाले उत्तर नेताओं के अज्ञान को प्रकट करते हैं।

2.6.2.2 चूहें :-

यह प्रतीकात्मक एकांकी है। चूहे समाज के नेताओं का प्रतीक है जो खुरेद-खुरेद कर समाज को खोखला बना रहे हैं। इस एकांकी के प्रमुख पात्र अनोखे चुहों ने मचाई उछल-कूद से परेशान हैं। समय-समय पर चूहों की आदतों से नेताओं की तुलना की गई है।

---

1. डॉ.शंकर पुणतांबेकर - बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ - इन्टरव्यू : एक चुनाव के उम्मीदवार, पृष्ठ - 63
2. वही, पृष्ठ - 67

जिसके द्वारा हास्य-व्यंग्य की उत्पत्ति हो गई है। मित्र पोपटलाल और अनोखे के संवाद के माध्यम से किस प्रकार से नेताओं की जनता को लूटनेवाली आदत चूहों की जैसी है, इस बात को स्पष्ट किया है। नेताओं को चूहों की उपमा दी है -

"अनोखेलाल : आसान अब नहीं रहा पोपटलालजी। लगता है आदमी की तरह चूहें भी चालाक हो गए हैं। वे पिंजरे से बचकर अपना काम ऐसे ही कर गुजरते हैं जैसे हममें से कुछ लोग कानून को धत्ता बताकर अपना उल्लू सीधा करते हैं। मेरा तो ख्याल है चूहें जैसी चालाक कोई जाति नहीं है।"[1]

स्पष्ट है कि नेताओं की पहुँच इतनी होती है कि पुलिस भी उनका कुछ नहीं बिघाड़ सकती। इस बात को बताते हुए पुणतांबेकर ने बड़ा ही सार्थक और सुयोग्य उदाहरण दिया है -

"पोपटलाल : दूसरा उपाय है बिल्ली। बिल्ली पाल लीजिए एक।

अनोखेलाल : अरे साहब, बिल्लियों का भी आजकल कोई भरोसा नहीं। कहते हैं किसी बड़े चूहे के सामने उसकी भी कुछ नहीं चलती।"[2]

इस प्रकार से व्यंग्यकार के व्यंग्य में हास्य की झलक दिखाई देती है। नेताओं पर किए गए व्यंग्य और दी गई उपमाएँ हास्य की निर्मिति करती है जो स्मित हास्य तक ही सीमित है।

2.6.3 कौटुंबिक हास्य-व्यंग्य एकांकी :

इस एकांकी संग्रह में अनोखे और उसकी पत्नी के माध्यम से पति-पत्नी की घरेलु नोंक-झोंक, झगड़े, उनका छोटी-मोटी बातों को लेकर लढते रहना आदि बातों को दिखाया गया है। इस प्रकार की एकांकियों में तितली, नहाने के बहाने, अनोखेलाल ने नौकर रखा, अनोखेलाल बीमार पड़ते हैं, अनोखेलाल चांदनी रात में, अनोखेलाल खाना बनाते हैं, अनोखेलाल का विवाह दिन आदि एकांकियों को समाविष्ट किया जा सकता है।

---

1. डॉ.शंकर पुणतांबेकर - बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ - चूहें, पृष्ठ - 171
2. वही, पृष्ठ - 172

2.6.3.1 **तितली :-**

यह एक प्रतीकात्मक एकांकी है। आधुनिक नारी की तितली जैसी स्वच्छंदी वृत्ति पर यह एकांकी हास्य-व्यंग्य प्रकट करता है। यह एक कौटुंबिक व्यंग्य एकांकी है। रतना के आधुनिक आचार-विचार तथा उससे उत्पन्न घरेलु तणाव को इस एकांकी के माध्यम से स्पष्ट किया गया है। रतना की इस स्वच्छंद वृत्ति को सामने रखकर ही एकांकी का शीर्षक 'तितली' रखा गया है। रतना अपने विचारों पर ही चलने वाली नारी है। वह आधुनिक नारी का प्रतिनिधित्व करती है। स्त्री-स्वतंत्रता के नारे लगाती है। महिला मंडल की सभाओं और भाषणों के सिवा उसे और कुछ सूझता ही नहीं है। पति की बात सुनना या मानना उसके लिए उनकी गुलामी करने जैसा है, जो रतना को बिल्कुल मान्य नहीं। व्यंग्यकार पुणतांबेकर इस तरह से अपनी अहम् को सँभालने के चक्कर में अपने घर के स्वास्थ्य को बिघाड़ने वाली औरतों पर इस एकांकी के माध्यम से व्यंग्य करते हैं। घर की नौकरानी राधा जो अनपढ़ है उसके द्वारा व्यंग्यकार ने रतना के इस वृत्ति पर टीका की है -

"राधा : पर, बीबीजी मैं पूछती हूँ स्त्री-स्वतंत्रता है क्या ? क्या अपने पति को छोड़ देना ?"[1]

अपने अहम् की रक्षा करने की कोशिश में स्त्री अपने विचारों का ही अनुसरण करने में ही अपने आप को धन्य मानती है। पुणतांबेकर इसको गृह-कलह का एक कारण मानते हैं। रतना भी इसी अति-आधुनिकता का शिकार है। उसे पति की कोई कीमत नहीं है। रतना के इस व्यवहार को देखकर उसकी सहेली शोभा भी चकित हो जाती है। रतना शोभा को समझाती है -

"रतना : इन सब बातों के लिए हम ही जिम्मेदार होती हैं। परिवार में रहकर स्त्रियाँ हकों का ध्यान रखें तो सब कुछ ठीक रहता है। नहीं तो पुरुष मीठे शब्दों से हमें मोह लेते हैं। सांसारिक जिम्मेदारीयाँ हमारे गले में डाल देते हैं।"[2]

रतना का घर तथा पति के साथ ऐसा व्यवहार देखकर शोभा और रतना का पति किशोर दोनों मिलकर रतना की खिंचाई करती है। तब उस को अपनी गलती का एहसास हो जाता है और वह किशोर से माफी माँगती है।

---

1. डॉ.शंकर पुणतांबेकर - बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ, तितली, पृष्ठ - 31
2. वही, पृष्ठ - 36

इस प्रकार से बेफिजूल की बातों को लेकर घर में तणावपूर्ण स्थिति को पैदा करनेवाली बातों को टालना ही उचित है। इस एकांकी के हास्य में भी एक प्रकार की शिष्टता दिखाई देती है।

2.6.3.2 नहाने के बहाने :-

प्रस्तुत एकांकी नहाने जैसे हलके-फुलके विषय पर लिखा गया है। इसमें अनोखे के उदाहरण द्वारा लोग क्यों नहाते हैं - इसके अनेक मजेदार कारण बताए गए हैं जो उपहसित हास्य की उत्पत्ति करते हैं। व्यंग्यकार ने इस बात पर व्यंग्य किया है कि जितनी चिंता तन की सफाई की करते हैं उतनी मन की सफाई की चिंता नहीं करते। अनोखे कहता है -

"अनोखे : शरीर को खूब रगड़-रगड़कर, साबुन से खुब मल-मलकर और ऊपर से खूब पानी उड़ेल-उड़ेलकर नहाने का युग है यह। लेकिन आदमी शरीर के साथ अपने मन को भी इसी तरह धोए तो ..."[1]

यहाँ पुणतांबेकर ने मन से छल-कपट के मैल की परतें हटाने की नेक सलाह अनोखे के द्वारा दी हैं।

2.6.3.3 अनोखेलाल ने नौकर रखा :-

यह एकांकी अनोखे के घर में रखे गए नौकर तथा नौकर को टिकाएँ रखने के लिए अनोखे के पत्नी द्वारा उठाए गए नौकर के नाज-नखरे पाठकों में विहसित हास्य को उत्पन्न करता है।

अनोखे की पत्नी लक्ष्मी अपनी अमीर सहेली को प्रभावित करने के लिए घर में नौकर रखती है लेकिन यह नौकर रामू को घर में रखना अनोखे को पसंद नहीं। रामू आए दिन कोई न कोई गलती कर ही देता है। कभी टेबल क्लॉथ पर स्याही गिरा देता है, कभी जुते पॉलिश करते वक्त उन पर सारा पॉलिश लगा देता है। वह कोई भी काम ढंग का नहीं करता और परिणाम स्वरूप अनोखे की डाँट खाता है लेकिन लक्ष्मी उलटे अनोखे को डाँट-फटकार के चुप बैठा देती है -

---

1. डॉ.शंकर पुणतांबेकर - बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ, नहाने के बहाने, पृष्ठ - 114

"लक्ष्मी : तुम्हें कितनी बार कहा है रामू पर गरम न हुआ करो, पर तुम हो कि अपनी आदत से बाज नहीं आते। पहला नौकर तुम्हारे इस स्वभाव के कारण नहीं टिक सका। जैसे-जैसे इसे पकडकर लाई हूँ तो इसे भी न टिकने दो। मिलते कहाँ है नौकर। दस जगह कह कर रखा तब तो मुश्किल से यह हाथ लगा है।"[1]

रामू के बीमार पड़ने पर भी लक्ष्मी उसे गाँव भेजने के बजाये खुद ही उसकी सेवा करने लगती है। उसे डर लगता है कि वह वापस लौट आयेगा या नहीं। नौकर को घर में टिकायें रखने के लिए किए गए प्रयास एकांकी में हास्य की निर्मिति करते हैं।

2.6.3.4 अनोखेलाल बीमार पड़ते हैं :-

एक पति अपने पत्नी द्वारा किए जाने वाले फिजूल खर्ची से बचने के लिए क्या-क्या तरिके अपनाता है, इसका बहुत मजेदार चित्रण प्रस्तुत एकांकी में किया गया है। यह एकांकी मंच पर प्रस्तुत करें तो दर्शकों की हँसी रुक न सकेगी। पत्नी की साड़ी खरीदने की मुसीबत से बचने के लिए अनोखेलाल बीमारी का नाटक करते हैं। लक्ष्मी घबराकर डॉक्टर को बुलाती है डॉक्टर इंजेक्शन देने लगता है तो अनोखे भाग-दौड़ करने लगता है। उनका यह दृश्य हास्य को उत्पन्न करता है लेकिन बाद में अनोखे को पता चलता है कि लक्ष्मी ने तो पहले से साड़ी खरीद ली है।

इस प्रकार से अनोखे अपने पैसों को खर्च होने से नहीं बचा पाता। यह एकांकी पाठकों में हास्य निर्मिति कराने में सफल रहा है।

2.6.3.5 अनोखेलाल चांदनी रात में :-

अनोखेलाल दोस्तों के साथ चांदनी रात में सैर पर जाने का प्रोग्राम बनाता है। लेकिन दोस्तों द्वारा ऐन मौके पर ना कहने के कारण वह अकेला ही लक्ष्मी के साथ सैर के लिए निकल पड़ता है।

प्रस्तुत एकांकी में अनोखे के रोमांटिक मूड और लक्ष्मी को लगी घर तथा बच्चे की चिंता के मेल के कारण हास्य-व्यंग्य की निर्मिति हो गई है।

---

1. डॉ.शंकर पुणतांबेकर - बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ, अनोखेलाल ने नौकर रखा, पृष्ठ - 121

2.6.3.6 अनोखेलाल खाना बनाते हैं :-

यह एकांकी भी पाठकों में उपहसित हास्य को निर्माण करने में सफल रहा है। इस एकांकी में अनोखे पत्नी से घर सँभालने की शर्त लगाकर फँस जाता है। खाना बनाते समय उसकी बनी हालत और सुबह-सुबह मची भाग-दौड़ पाठकों को हँसाए बिना नहीं रहती है।

प्रस्तुत एकांकी पतियों की शेखी बघारनेवाली आदत पर हास्य-व्यंग्य करता है।

2.6.3.7 अनोखेलाल का विवाह दिन :-

अनोखेलाल तथा उसकी पत्नी अपना विवाह दिन मनाने के लिए एक सुंदर जगह पर जाने की तैयारी करते हैं और आपसी नोंक-झोंक में इतने उलझ जाते हैं गाड़ी का वक्त निकल जाता है। आख़िर में विवाह दिन घर पर ही मनाते हैं।

इन समस्त एकांकियों में हास्य-व्यंग्य के स्वरूप का विचार करते समय यहीं कहना होगा कि इनमें शिष्ट हास्य एवं संयत व्यंग्य को अपनाया गया है। पुणतांबेकर द्वारा लिखित सामाजिक, राजनीतिक, कौटुंबिक एकांकियाँ व्यंग्यात्मक तो हैं ही कुछ मात्रा में हास्य निर्मिति भी अवश्य करते हैं।

❑ निष्कर्ष -

हास्य-व्यंग्य का स्वरूप स्पष्ट करते हुए कहा जा सकता है कि हास्य और व्यंग्य यह दो अलग संकल्पनाएँ हैं। इन दोनों के मिश्रण से हास्य-व्यंग्य की रचना की जा सकती है। हास्य और व्यंग्य की अनेक विद्वानों ने अपनी दृष्टि से परिभाषाएँ प्रस्तुत की हैं तथा उसके विभिन्न प्रकार भी बताए हैं। जिससे हास्य और व्यंग्य का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है।

'बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ' में संग्रहित एकांकियों के द्वारा सामाजिक, राजनीतिक, कौटुंबिक आदि विभिन्न विषयों को लेकर एकांकी लिखे गए हैं। इन एकांकियों में व्यंग्यकार पुणतांबेकर ने हास्य-व्यंग्य के माध्यम से समाज की विकृतियों तथा विसंगतियों को सामने रखा है। कुछ एकांकी अधिक हास्यात्मक तो कुछ अधिक व्यंग्यात्मक बन गए हैं। इसमें शिष्ट हास्य और संयत व्यंग्य की अभिव्यक्ति हुई है। पुणतांबेकर के व्यंग्य में गंभीरता दिखाई

देती है। उनकी मान्यता है कि व्यंग्य के लिए विशिष्ट लेखन शैली महत्त्वपूर्ण है। इस दृष्टि से उनके विवेच्य एकांकियों में विशिष्ट कथन भंगिमा के कारण हास्य-व्यंग्य का प्रभाव दिखाई देता है।

विवेच्य एकांकी संग्रह के 'बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ' शीर्षक एकांकी में खासा व्यंग्य है। इसमें संकलन-त्रय का अभाव होते हुए भी चिकित्सा क्षेत्र पर प्रकाश डालने में यह सक्षम है। महाविद्यालय के रंगमंच पर आज भी यह एकांकी खेला जा सकता है। स्नेह-संमेलन एवं हिंदी-दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रमों में प्रदर्शित करने लायक एकांकियों के अभावपूर्ति का कार्य पुणतांबेकर के विवेच्य एकांकियों से हो सकता है।

विवेच्य एकांकियों में पुणतांबेकर समाज में स्थित बुराई पर चोट करते हैं, समाज में सुधार लाने की कोशिश करते हैं। इससे उनका समाज हित का दृष्टिकोण स्पष्ट होता है।

❑❑❑❑